यहाँ से वहाँ तक

महेन्द्रनाथ

बाम्बे बुक हाउस
बाम्बे २

अनुक्रमणिका

अन्धेरा और उजाला

एक पल के लियें कपिला की आँखों में बिजली चमक गई, और फिर उसी क्षण में अदृश्य होगई, मुझे ऐसा ज्ञात हुआ कि किसी भटके हुये पथिक ने मशअल दिखाई, एकाएक पथ प्रकाश से प्रकाशित हो गया, केवल एक ही पल के लिये - और फिर अन्धेरा– पूरा अन्धेरा।

जब कपिला के घर वालों ने कपिला को हमारे घर भेजा था; उन्हें इस बात का पूरा विश्वास था कि कपिला का हर प्रकार से ध्यान रक्खा जायेगा, और चाची तो खुद भी एक पुरानी औरत थीं जिसने सॅसार की ऊँचाई नीचाई देखी थीं। वह इस नई सभ्यता की बुराइयों को अच्छी तरह जानती थी। वह हर सॅभव तरीक़े से अपनें बच्चों को इस नई सभ्यता को अपनाने से रोकतीं, परन्तु पश्चिमी सभ्यता कुछ इस चाल से आ रही थी कि अकेली चाची उसे रोकने से लाचार थी, लेकिन चाची की तेज़ निगाहें घर के हर मनुष्य पर पड़ती, उन्हें टटौलती, उन्हें जानने की कोशिश करतीं, और कभी कभी समझाकर के वापस आजातीं, लेकिन नवीन सभ्यता

पूरे बल के साथ बढ़ रही थी। कपिला के लिये यह घेरा नया था। वह उस घर में पली थी जहाँ स्वतंत्रता अधिक होती है और प्यार बहुत बढ़ जाता है और बच्चे का हर नाज़-नख़रा सहन कर लिया जाता है।

लेकिन यहाँ कुछ और ही बात थी, यहाँ न नौकर थे न नौकरानियाँ, बस दो छोटे से कमरे।

यहाँ न ड्राइङ्गरूम था न सोने का कमरा न खाने का अलग कमरा, कमरों में न रँगीन पर्दे थे न सोफ़ासेट, वही दो कुर्सियाँ थीं और एक बड़ी चटाई जो बहुधा फ़र्श पर बिछी रहती थी एक कोने में एक मेज़ पड़ी हुई थी जिस पर घर के हर प्राणी की चीज़ें पड़ी रहती थीं। किसीकी दवात है तो किसीका रूमाल, किसी का कँघा है तो किसी का धूल से भरा हुआ हैट। मेज़पोश निहायत ही मैला और गन्दा होता था, जिस पर अनेकों स्याही के धब्बे होते थे अगरचे हर तरीक़े से कमरे की स्वच्छता का ध्यान रक्खा जाता था परन्तु इतनी सफ़ाई होनें पर भी कमरे कबाड़ ख़ाने मालूम होते थे। गर्मियों के दिनों में मक्खियों की फ़ौजें घूमा करतीं, और कभी कभी ऐसा ज्ञात होता कि कमरे उन्हीं मक्खियों के लिये बने हैं। भोजन करने के समय मक्खियाँ थालियों के निकट मँडलातीं और बहुधा निवालों के साथ अन्दर जाने की कोशिश करतीं। फिर कपिला के लिये ऐसा कोई मनोरञ्जन न था जिससे वह इस घर में प्रसन्न रह सकती। अगर उसे किसी बात

का धीरज था तो यह कि वह लाहौर में रही है। लाहौर की याद कितनी स्वप्नवत् होती है, इस के बारे में वह लड़के या लड़कियाँ बता सकती हैं, जो लाहौर में रहते हैं, या लाहौर जाने की इच्छा रखते हैं। लाहौर ने प्यार के लिये एक विशेष स्थान पैदा कर लिया है।

और कपिला उन लड़कियों में से थी; जिनके दिल व मस्तिष्क में लाहौर की रँगीन बहारें बसी हुई थीं। यूँही मन ही मन में कपिला अपने आप को नई बहार में पाती, स्वप्नों से अपने मस्तिष्क को भर लेती। वह लाहौर को जीभर कर देखना चाहती थी, उसके हर क़ोने हर बज़ार हर होटल, हर सिनेमा को वह मैकलोड रोड पर सैर करना चाहती थी। वह लारेंस गार्डन देखना चाहती थी, वह केवल इन स्थानों को ही नहीं, बल्कि उन लोगों को भी जो इस रँगीन बहार का हिस्सा हैं। वह उन दृश्यों में डूबना चाहती थी, वह चाहती थी; कि वह अच्छे से अच्छा पहिनावा पहिन कर सैर करने जाये। और फिर कोई उसकी तरफ़ यूँही देख ले..... देख ले तो क्या हर्ज है, लेकिन वह किस के साथ जाती?

सुबह वह लारी में बैठ कर स्कूल चली जाती और शाम को वापस आजाती, फिर वह स्कूल का काम करती; यहाँ तक कि शाम के साये बढ़ने लगते, और धीरे धीरे घर के चारों ओर एक न मिटने वाला अँधियारा छा जाता।

और फिर मैं आ धमका, यूँही बेकार सा; आवारा सा; जीवन से उकताया हुआ। पहिले पहियें कपिला ने मुझे कुछ न समझा जैसे मैं क्या हूँ, और मैं ने भी उसे कुछ न समझा जैसे वह क्या है, यूँही छोटी सी बच्ची तो लगती है, और अगर वह बच्ची न भी लगती तब भी मुझे कुछ समझना न चाहिये था क्योंकि वह चाची की सगी थी और जो चाची की सगी हो वह मेरी भी सगी होगी, और चाची ने एक दिन स्पष्ट शब्दों में कह भी दिया कि कपिला तो मेरे पास अमानत है, मुझे तो उसका पूरा ख़्याल रखना होगा, शब्द "अमानत" पर चाची ने बहुत ज़ोर दिया।

कपिला बिल्कुल छोटी सी गुड़िया लगती थी, उसका क़द बहुत छोटा था, यद्यपि उसका शरीर गदराया हुआ था, परन्तु ऐसा होते हुये भी ग्यारह-बारह वर्ष की ही ज्ञात होती थी। उसका चेहरा छोटा सा, गोलसा, उसका मस्तक छोटासा, परन्तु उसकी आँखें बड़ी बड़ी सी थीं, जिन में बहुत ही आकर्षण और चञ्चलपन था। मझे तो वह गुड़िया सी ज्ञात होती थी परन्तु उस के नाज़-नख़रे, उसका स्वभाव, उसका कम्पन इतना चुलबुला था कि मुझे उस की ओर झुकना ही पड़ा, उसकी भौहें तनी रहतीं, उसके नथुने फड़कते रहते और वह अपने छोटे छोटे होठों पर जीभ फेरती रहती, कभी उसका सर हिलता तो कभी हाथ, कभी दुपट्टा सर पर होता और कभी गिर कर

कन्धों पर, और कभी गिरते गिरते कमर के चारों ओर आजाता। उसके कपड़े बहुधा कसे हुये होते और अक्सर शरीर पर फँस कर आते और उसकी शरीरिक खिँचावट को प्रकट करते, परन्तु जिस बात ने मुझे अधिक झुकाया वह उस की मुस्कराहट थी जो उसकी आँखों में नाचती रहती और फिर ढुलक कर उसके लाल लाल गालों की तरफ़ आजाती और फिर उसके होंठ ज़रा सी कम्पन करते हुये एक ओर खिँच जाते और मुस्कराहट होठों पर नाचनें लगती, और नाचती रहती।

कुछ दिनों से उसका चुलबुलापन, भयानकता में परिणित हो रहा था, वह अक्सर चाची से लड़ती रहती, और सब्ज़ियों तरकारियों में ऐब निकालती, कभी कहती दाल में नमक अधिक है, चपाती के किनारे मोटे हैं, चपाती पर घी अधिक लगा हुआ है, सब्जियाँ स्वादिष्ट नहीं हैं, भूख नहीं लगती अर्थात् प्रति दिन झगड़े। यद्यपि चाची तनिक डांट दे तो झट रुष्ट हो गई और बिस्तर पर लेट गई, टप टप अश्रु गिरने लगे अब मनाये कौन। और फिर कभी कभी कहती कि चाय अच्छी नहीं लगती, और यदि चाय के बजाय दूध दिया जाय– तो दूध में ऐब निकाल देती, और कहती– दूध में मलाई पड़ी हुई है, दूध छान कर दो, और कभीं कभीं कपड़ों के विषय में झगड़े होते और वह कहती मेरे पास रूपये कम रह गये हैं, धोबी क़मीज़ के बटन तोड़ लाया, सलवार का पाँयचा छोटा

होगया है, आज स्याही नहीं है, कल दावात न होगी, अर्थात् प्रति दिन नई नई माँग। चाची बेचारी तो पागल हो गई और फिर कपिला उन के लिये अमानत थी, केवल धरोहर थी। बस यह न चाहती थी; कि मैं कपिला और उनके झगड़ों में पड़ता। और परिणाम् यह हुआ कि कपिला प्रति दिन ऐब निकालतीं और कभी कभी मैं घबरा जाता और सोचता, आख़िर क्या बात है, कपिला इस प्रकार क्यों करती है, परन्तु इस अन्धेरे में उजाले की किरण दिखाई न देती, कहने का अर्थ यह है कि मुझे कपिला की इन शरारतों को भी अनदेखी करना पड़ा। शरारतें प्रतिदिन बढ़ रही थीं, कपिला की आँखों की चमक ओस की बूँदों की तरह धोखे से भरी हुई और दिल को खींच रही थी, और फिर अनोखी मुस्कराहट-- कभी कभी वह मेरी तरफ़ देखती और अनोखी नज़रों से मुस्करा देती, परन्तु मैं चुपचाप था, बिल्कुल उस पक्षी की तरह जो उड़ने के लिये तय्यार हो, लेकिन किसी छुपे हुये सॅकेत की प्रतीक्षा मे हो।

और फिर मैं ने उस दिन पूछ ही लिया "कपिला— तुम्हारी आयु क्या होगी"?

"यही पन्द्रह साल" उसने डुपट्टे को छाती से सरकाते हुये कहा। "पन्द्रह साल" मुझे ऐसा मालूम हुआ जैसे किसी ने मेरे मुँह पर ज़ोर से चपट लगाई है, मैंने गिर कर सम्भलना चाहा और फिर कहने लगा— "मैं तो

समझता था कि तुम दस-बारह वर्ष की होगी, और यूँही छोटी सी गुड़िया" और मूर्खों की तरह मुस्कुराने लगा।

"जब ही तो आप हमसे बात तक नहीं करते, बड़े समझते हैं अपने आप को" उसने तुनक कर उत्तर दिया।

"हूँ———— अब बातें बनानी भी आगई" मैंने छेड़ते हुये कहा।

जी हाँ———— „आप तो बुद्धिमान ठहरे; हम तो बच्चों की सी बातें करते हैं न" उसने आँखों को मटकाते हुये उत्तर दिया।

"हम तुम से बात नहीं करेंगे" मैंने रौब जमाया।

"आप कौन बात करता है, बड़े आये हो" उसने मुँह फुला कर कहा। और फिर चाची आगई; कहने लगीं--

"भाई क्यों लड़ते हो; बहन भाई मे फिर लड़ाई आरम्भ हो गई; न, बाबा! मुझे लड़ाई अच्छी नहीं लगती, अच्छा———— अब चुप हो जाओ"।

और एक दिन कपिला बहुत ही नाराज़ हो गई, चाची ने मुझे बुलाया और कहने लगीं– परमेश्वर के लिये उस डाइन को मना लाओ, सुबह से कुछ नहीं खाया, यूँही मुँह बनाते हुये ऊपर चली गई, अजीब लड़की है यह।

मैं खट खट ऊपर सीढ़ियाँ चढ़ गया; आकाश हल्का हरा और नीला था, शफ़तालू के पत्तों की तरह दूर पश्चिम की ओर एक हल्की सी धूल छाई हुई थी, जो धीरे धीरे पूरब की ओर बढ़ती चली आरही थी। बिल्कुल

कपिला के विचारों और भावनाओं की तरह, जो मेरी ओर तेज़ी से बढ़ रहे थे। मलमल का डुपट्टा ओढ़े कपिला चारपाई पर लेटी हुई थी, उस सफ़ेद सफ़ेद कुछ कुछ मैले और धुँधले डुपट्टे में कपिला के चेहरे ने एक नई सूरत बनाली, बिल्कुल उस सूर्य्य की तरह जिसके चारों ओर धुँधला छाया हुआ हो, और जो उस धूल को चीर कर बाहर निकलना चाहता हो। मुझे देख कर कपिला ने आँखे मूँद लीं और करवट लेकर दूसरी ओर मुँह फेर लिया।

"कपिला!----- कपिला चाची बुलाती हैं" मैंनें ज़ोर से कहा। कपिला चुप थी।

मैंने कपिला का सिर हिलाया, और फिर धीमे स्वर से कहा- "कपिला- उठो, चाची बुलाती हैं"

"मुझे आज भूख नहीं है"।

"अरे कुछ तो खा लो"।

मैंने कह दिया „मुझे भूख नही है"।

मैंने डुपट्टा उसके अँग से उतार फेंका; और गुर्राते हुये कहा- "उठती हो या नहीं----नहीं तो ज़बरदस्ती नीचे ले जाऊँगा"

"हाथ तो लगाओ" उसने चीख कर कहा।

„अच्छा--- तो यह बात है, आख़िर बच्ची हो न, बिल्कुल बच्चों जैसा सलूक चाहती हो"

"उठा कर नीचे ले जाइये" धीमे स्वर से कहा;

उसकी आँखों में मुस्कुराहट नाचने लगी, और पलकों में से होती गालों पर ढलकी और फिर वह छोटे पतले से होंठ मुस्कुराहट से काँप उठे, बिल्कुल गुलाब की पत्तियों की तरह, जिनको वायु का झोंका चूम गया हो और फिर मेरे हाथ बढ़े। मैंने कलाई ज़ोर से पकड़ी और अपनी तरफ़ खींचा। वह अपने आप मेरी छाती से आलगी, बिल्कुल रबड़ के फ़ीते की तरह, जो झटका खाकर वापस आजाता है। उसका गरम गरम स्वाँस मेरे गालों को छूता हुआ-- मालूम हुआ, उसकी आँखें पानी से भर गई और मुस्कुराहट नाव बन कर तैरने लगी; नाक के नथुने फैल गये और स्वाँस ज़ोर ज़ोर से चलने लगी। माथे पर पसीने की बूँदे झलक आई; मैं कुछ घबरा सा गया। कपिला ने झट अपने आप को झटक दिया और चारपाई पर बैठ गई।

"मैं चाची से कह दूँगी" उसने मेरी तरफ़ घूरते हुये कहा। "क्या कहोगी"?

"यहीं------ कि आज आपने मुझे छेड़ा है"।

"बेहूदा बकवास; मैंने तुम्हें कब छेड़ा है"।

"आपने क्यों मेरी कलाई पकड़ी; मेरी कलाई में दर्द होता है; लो यह काँच की चूड़ियाँ भी टूट गई"। और फिर मुस्कुराने लगी।

"अच्छा अब चलो" मैंने रौब डालते हुये कहा।

"अच्छा बाबा; चलती हूँ; तुम जीते; मैं हारी;"

और वह चल पड़ी।

इस घटना के पश्चात् कपिला की आदतें बदल गईं। गो; वह चाची से हर बात पर झगड़ती थी, और चाची तँग आकर कह देती कि "मैं तुम्हारे पिता जी को लिखती हूं कि कपिला मेरा कहना नहीं मानती; अब इसे वापस बुलालो"। और अक्सर कपिला नाक सिकोड़ कर उत्तर देती "लिख दीजिये न, मैं स्वयं यहाँ से तँग आगई हूँ"। और मेरी ओर मुस्कुरा कर देखती, जैसे वह मुझ से कहलवाना चाहती है कि- "नहीं नहीं मत जाओ कपिला"।

यद्यपि वह चाची से हर बात पर लड़ती झगड़ती थी, परन्तु अब मेरी हर बात मान जाती थी। अक्सर चाची उसे किसी बात से रोकते रोकते थक जाती तो वह मुझ से कहती-- "लो भई, अब तुम समझाओ इसे; मैं तो कह कहकर हार गई"।

जब वह भोजन न करती तो मुझे उसे मनाने को वाध्य किया जाता।

"खाना क्यों नहीं खाती हो"

"नहीं खाऊँगी" वह गुर्राती।

"क्या ख़राबी है" मैं ज़ोर से कहता।

"मुझे खाना अच्छा नहीं लगता"

"मैंने अभी अभी खाया है, मुझे तो बड़ाही स्वादिष्ट लगा है"।

"तो मैं क्या करूँ" और वह घूर घूर कर मेरी ओर देखती और मैं उसकी आँखों की ओर देखता जिनमें

अभी अभी जल था और अब एकाएक चिनगारियाँ निकलने लगी। उसकी आँखों से अँगारे निकलने लगते और फूल जैसे गाल तमतमा उठते, और होंठ थर्राने लगते।

"खाओ; बाबा; मेरी दशा पर दया करो" मैं ज़रा प्रेम से कहता।

परन्तु अमानत ---------- अमानत ही होती है, यदि कपिला चाची की आमानत है तो मेरी भी अमानत है, इसमें बेईमानी करने का मुझे कोई अधिकार नहीं, यदि कोई ऐसी वैसी बात हो जाये तो कौन ज़िम्मेदार होगा। चाची मुँह दिखाने के योग्य न रहेगी, शादी करने से तो मैं रहा; यह तो कपिला भी जानती है कि वह मुझ से विवाह नहीं कर सकती, वह मेरी चाची की सगी है और मैं उसकी चाची का सगा, बीच में चाची अड़ी है, चीन की भीत की तरह, अनगिनत सदियों कीं ईर्षा और मूर्खता रास्ता रोके खड़ी है, इस घेरे से निकलना कठिन है, चाहे उमँगे कुचलीं जायें; इच्छायें मुर्दा हो जायें; औरतें जवानीं में बूढ़ी हो जायें, लेकिन चीनकी दीवार स्थिर है और स्थिर रहेगी।

कपिला कीं मेहरबानियाँ मेरे लिये बहुत बड़ा बोझ होगई, इस अनोखे प्रेम का अनोखा ही स्वाद था। अब कपिला मेरी हर बात मान जाती थी, अब वह हर बात का उपकार मुझ पर जताने लगी, उस की हर निगाह, हर कम्पन, हर वाक्य मुझे प्रसन्न करने मे व्यय होता।

यद्यपि वह घर का कारबार नहीं करती थी और चाची की हर बात को टाल देती थी, चाची विवश होकर मुझे कहतीं और मैं कपिला से कहता और फिर कहीं जाकर वह काम करती। चाची ने कईबार कपिला को साड़ी पहिनने को कहा था, लेकिन हर बार कपिलाने इन्कार कर दिया, यूँही कह देती– "साड़ी मुझे अच्छी नहीं लगती, मुझे बाँधनी नहीं आती; मुझे ब्लाउज़ पहिनने से शर्म आती है"। एक दिन मैंने भी कह दिया कि साड़ी पहिना करो, छोटे क़द की लड़की को साड़ी अच्छी लगती है। दूसरे दिन देखा तो कपिला साड़ी पहिने खड़ी थी; आसमानी रँग का ब्लाउज़ पहिना हुआ था। और वह खूबसूरत गोल गोल बाजू ब्लाउज़ से बाहर झाँक रहे थे; बिल्कुल सेब की टहनियों की तरह।

"ख़ूब; भई ख़ूब लगती हो कपिला; इस साड़ी में। और वह मेरी तरफ़ लपकी, और मैं पीछे हट गया। बिल्कुल अनोखे ढँग पर, उसकी तिर्छी निगाहें फिर उभरीं, उन्होंने मुझे ताका और फिर वह अपने हाथों से साड़ी ठीक करने लगी।

इन बातों ने और भी मुझे व्याकुल कर दिया। और मैं कुछ उदास और उधेड़बुन में रहने लगा। बहुधा रात भर मुझे नींद न आती क्यों कि कपिला की चारपाई थोड़ीही दूरी पर होतीं और बीच में चीन की दीवार, एक न पार होने वाली दीवार।

चाची जल्द ही सो जाती और चाची के ख़र्राटों की आवाज़ आती और मैं अधिक व्याकुल हो जाता। रात की कठिनाइयाँ और कठिन होजाती और अँधेरा– और पूरा अन्धेरा हर तरफ़ फैल जाता, परन्तु फिर, ख़र्र --- ख़र्र --- ख़र्र, यह स्वर कमरे के अँधियारे को चीर कर निकल जाता। खर्र – ख़र्र – ख़र्र, बेहूदा, बेमतलब, ख़र्र – ख़र्र मुझे ऐसा मालूम होता, जैसे तमाम दुनिया जाग रही है; जैसे अन्धेरा नहीं है, जैसे कमरे में एक हज़ार कैंडिल पावर का बल्ब लगा दिया गया है और फिर ख़र्र – ख़र्र – ख़र्र। हथौड़े की चोटों की तरह मस्तिष्क पर चोटें लग रही थी; क्यों पूरी शान्ति नहीं, कितना अच्छा होता ख़र्र – ख़र्र – खर्र बन्द हो जाती और अन्धेरा इन ख़र्राटों को अपने अन्दर समा लेता। इस फैले हुये अन्धेरे में मुझे कमरे की हर चीज़ दृष्टिगोचर होती मुझे ऐसा ज्ञात होता कि कमरे की हर वस्तु मानव बन कर मेरी ओर झाँक रही है। सामने मेज़ पर पड़ा हुआ हैट मेरी ओर देख रहा था, जैसे मेरी हर कम्पन को अपनी डायरी में लिख रहा है, सामने टँगी हुई नेकटाई मेरे गले में फँस कर रह गई है, और अलमारी में से किताबें बाहर निकल पड़ी हैं, उनका हर पन्ना किताब से निकल कर मेरे चारों ओर चक्कर लगा रहा है– स्टूल, क़मीज़, पाजामें सब अपनी अपनी जगह बिराजमान हैं और व्याकुल निगाहों से मेरी ओर देख रहे हैं, और फिर खर्र - ख़र्र - खर्र। कभी कभी

कोई कुत्ता भौंकता तो उसकी आवाज़ मेरे विचारों को चीर कर आगे निकल जाती।

और जब कभी कभी चाची के खर्राटों की आवाज़ बन्द हो जाती तो इस गहरी शान्ति और अन्धेरे में किसी के स्वास उलझ उलझ कर रह जाते, और यूँही रात बीतते बीतते बीत जाती, और जब प्रभात होता तो कपिला का चेहरा उतरा हुआ होता और मेरे चेहरे पर रात की परेशानी साफ़ दिखाई देती।

इस बुद्धि के फैले हुये विचारों ने हम दोनों के स्वभाव को चिड़ चिड़ा कर दिया, ऐसा मालूम होता कि हमारे गले में डाट फँस कर रह गया है। अब कपिला की आँखों में चमक न थी, बल्कि एक मैला सा धुँधला सा क्रोध जो बुद्धि के व्याकुलपन को अधिक प्रकट करता है, उसकी मुस्कराहट में खिँचाव सा आगया था, शायद वह इन मुस्कुराहटों के परिवर्तनों को समझ चुकी थी कि उनका प्रभाव तो होता ही नहीं, यदि वह मेरे सामने आजाती तो मैं चुपचाप हो जाता मैं उसकी आँखों की ओर न देखता, अब उस के होंठ न फड़ फड़ाते, उसके नथने न फैलते, इसके पहिले कि मैं कुछ कहता वह नज़रों से ओझल होजाती, परन्तु नज़रों से अदृश्य हो जाना इस मसले का हल न था, ज्यों ज्यों मैं इस मसले पर ध्यान देता ज़्यादा कठिन हो जाता, कभी कभी यह ध्यान आता कि यदि कपिला घर चली जाये तो, लेकिन इस ख़्याल के आते ही

मेरे हृदय पर एक ठेस लगती जिसे मैं सहन नहीं कर सकता था, परन्तु.......... इस बुद्धि की कमी से क्या उपलब्ध? इस बुद्धि की बीमारी का क्या उपचार।

और फिर एक रात जब हम छत पर सोये हुये थे-चाची के पेट में दर्द शुरू होगया, बहुत हीं कड़ा दर्द, वह दर्द से चिल्लाने लगीं और मुझे विवश होकर उठना पड़ा; चारों ओर अन्धेरा था; निकट के घर अन्धेरे में ऊँघ रहे थें। दूर्-दूर पश्चिम कीं ओर बिजलीं चमकतीं औरें एक पल में ओझल हो जाती, हवा गर्म थी इस लिये दिन की गर्मी ने रात को व्याकुल कर दिया था प्यास से गला सूख रहा था, मैं जल्द जल्द सीढियाँ उतरने लगा, जब मैं सीढियाँ उतर चुका तो फिर खट्-खट्-खट् की आवाज़ आई मैं रुक गया।

"कौन है"? मैं अन्धेरे में चिल्लाया।

"कोई नहीं, मैं हूं"। कपिला ने जवाब दिया। बिजली ज़ोर से चमकी, और एक क्षण के लिये प्रकाश होगया, फिर खट्-खट्-खट् की आवाज़ आई।

"क्या काम है तुम्हें कपिला"?

"प्यास लगी है भइया"।

और वह नीचे उतरने लगी, और मैं सीधा कमरे में चला गया।

बिजली के कुमकुमे को प्रज्वलित किया, अमृतधारा की शीशी ढूँढनें लगा, इतने में कपिला आगई।

"पानी पी लिया तुमनें"?

प्यास नहीं बुझती, और उसकी निगाहें मेरे नंगे बाजुओं पर जम गईं।

मैंने केवल धोती बाँधी हुई थी, और ऊपर का धड़ नंगा था, उसकी निगाहें मेरे शरीर को धीरे धीरे टटोल रही थीं, और फिर वह ऊपर बढ़ीं। चौड़ा चकला सीना, बाहों के पुट्ठे मज़बूत और कड़े और फिर ऊपर—— सीनाकिसी यूनानी मूर्ति की तरह उभरा हुआ फिर निगाहें रुक गईं, वह ऊपर न बढ़ सकीं, शायद भावनाओं की अधिकता ने इन्हें आगें न बढ़ने दिया, गरदन की रगें फैल गईं, बाहों के पुट्ठे फड़फड़ानें लगे, सीना अधिक उभर गया, आँखों में खून दौड़ने लगा, और कनपटियाँ चलनें लगी, मैं आगे बढ़ा, लेकिन तत्काल पीछे हट गया, मैंनें कमरे की दीवारों पर निगाह दौड़ाई, हर तरफ़ अमानत—अमानत—अमानत लिखा हुआ था, लेकिन मैं चाचा के लिये अमृतधारा लेनें आया था, अमानत और अमृतधारा, ज़िन्दगी और दवा, खुशी—हार—भागना, सगे सम्बन्धियों ताने, गालियों की बौछार, भलमनसाहत की अर्थी। लेकिन कपिला अपनीं जगह पर खड़ीथी, बिल्कुल उस पक्षी की तरह जिसे शिकारी नें चारों तरफ़ से रोक रक्खा हो, और शिकारी कौन था, शायद उसकी भावनायें, उसकी अपनी भावनायें जो गिर गिर कर उभरती थीं, जो बिगड़ बिगड़ कर बनती थीं।

कमरे में बिजली का क़ुमक़ुमा मुझे बहुत ही भद्दा मालूम हुआ, जी में आया कि क़ुमक़ुमे को तोड़ दूँ, ताकि अमानत की हर याद मेरे दिमाग़ से निकल जाये, यहाँ अन्धेरा नहीं है, इतना प्रकाश कहाँ से आगया, बाहर क्यों-अन्धेरा है, कितना अच्छा हो यहाँ भी अन्धेरा हो जाये, शब्द अमानत, इस प्रकाश में प्रश्न सूचक चिह्न बन कर मेरी नसों में काँटा बन कर चुभ रहा था, लेकिन यह प्रकाश, काश यहाँ भी अन्धेरा हो जाये, हाथ को हाथ दिखाई न दे, लेकिन बिजली का क़ुमक़ुमा प्रकाशित है, मेरे पिसे हुये विचारों की तरह यह विचार मरते नहीं, अब तक जाग रहे हैं, इस आँधी में साँपों की तरह रेंग रहे हैं, निर्जीव, निर्बल विचार, लेकिन यह रोशनी यह अमृतधारा, और यह अमानत, लेकिन यह मेरी अमानत तो नहीं, चाची जी की है, चाची के पेट में दर्द है; उसे अमृतधारा चाहिये, लेकिन मुझे अमृतधारा मिल रही है, मेरी आत्मा को भी कष्ट पहुँच रहा है, लेकिन मेरे लिये अमृतधारा अमानत है। फिर बिजली ज़ोर से चमकी और मेरे विचारों का सिलसिला टूट गया, ओह्! चाची पीड़ा से कराह रही होगी, इस ख़्याल के आते ही मैं बाहर निकल गया, और सीधा छत पर चला गया। बादल फट चुके थे, दूर पश्चिम की ओर बादल झुके हुये थे, साथ वाले बाग़ से हरी-हरी घास की ख़ुशबू आरही थी, और भीगी हुई मिट्टी की सुगन्ध मेरे थके हुये दिमाग़ में समा रही

थी, मैं दीवार के साथ लग गया, और अन्धेरे की लहरों को अपने अन्दर समोने लगा, नीचे वाले मकान में किसी ने वत्ती जलाई, प्रकाश ------ और अन्धेरा ------- और रोशनी। क्या कभी अन्धेरा न होगा बिल्कुल घुप अन्धेरा, चारों तरफ़ अन्धेरा। उसके शरीर के हर कण में अन्धेरा समा जाये या बिल्कुल प्रकाश हो जायें, चारों तरफ़ प्रकाश, और अन्धेरा कभी न हो, कहीं न हो। मैं सोचते सोचतेथक गया। कहीं सोचते सोचते पागल न हो जाऊँ, इस सोचने से क्या लाभ, और फिर किसी की आहट आई, इतने में कपिला आगई, बिजली फिर लपकी। कपिला का चेहरा पीला दिखाई दिया, उसके बाल बिखरे हुयें थे, और आँखें मरते पक्षी की तरह निर्जीव और आवारा दिखाई देती थीं। हाथ में अमृतधारा की शीशी थी, यह अमृतधारा किसके काम आयेंगी? पश्चिम की ओर बिजली चमकती रही, हवा मिट्टी से बोझल हो रही थी, और गला सूखा और बन्द हुआ जाता था, अब धीरे धीरे अन्धेरा बिखरने लगा, और पूरब की तरफ़ कुछ नक्षत्र दिखाई दिये, और हल्की हल्की रोशनी फैलती गई।

कपिला को गयें लगभग दो साल हो गये हैं, मैं उस की शक्ल-सूरत को एक तरह से भूल चुका हूँ, लेकिन उस की भावनायें और चित्र मेरे दिल व मस्तिष्क में बैठ गये हैं, और अब ऐसा मालूम होता है कि वह मेरे जीवन का तत्व बन गये हैं। मैंने उन भावनाओं को हर तरीक़े

से कुचलने की कोशिश की, लेकिन जितने जोर से कुचलना चहा, उतने ही ज़ोर से यह उभरते रहे। शायद कपिला अब बहुत ऊँची होगई है, उसका छोटा सा चेहरा बड़ा हो गया है, वह पहिले से अधिक सौंदर्यवान हो गई है। लेकिन कौन जानता है कि वह कहाँ है, और वह अब कैसी है, मैं तो कुछ नहीं जानता, हो सकता है कि उसकी रुकी हुई भावनाओं ने नई राह ढूँढ लीहों, लेकिन मेरे लिये उसकी भावनायें जिन्दा हैं, अब तक एक दम ताज़ी हैं। मैं उन्हें उसी ज़ोर से महसूस करता हूँ, जिस जोर से वह महसूस किया करती थी, मैं आज तक फ़ैसला न कर सका कि जो कुछ मैंने किया, वह अच्छा था, या जो मैं करना चाहता था वह अच्छा था।

सुबह-दोपहर-शाम

यह अजीब संयोग की बात है कि जब कभी मैं इस बाज़ार से गुजरता हूँ, वह औरत मुझे इस बाजार में चक्कर काटते हुए मिलती है। यों औरतें देखना कोई अपराध नहीं, विशेषकर सौन्दर्यवान औरतें। भला औरतें ही क्यों, मर्द भी रूपवान होते हैं, इन्हें देखकर चित प्रसन्न होता है और बुद्धि में अच्छी अच्छी वस्तुएं उभर आती हैं। सुन्दर औरतों को देखकर खूब सूरत चीजों का ख्याल आता है, उदाहरणार्थ रेशमी कपड़े, सुनहरे बाल, धान का खेत, नारियल के पेड़ के पीछें उभरता हुआ चन्द्रमा, मनहर मुस्कराहट, गिरते हुए झरने, लजाई हुई आंखें, नीला आकाश प्रातःकाल और सन्ध्या समय आकाश पर फैली हुई लाली, कन्धों पर बिखरे हुए बाल, हंसता हुआ चेहरा, कुछ न जानने वाली निगाहें, चौड़ा-चकला सीना, प्रेम-वियोग की बातें और इसी तरह की अलग-अलग मनोहर रंग-बिरंगी तस्वीरें बुद्धि के पर्दे पर उभर आती हैं, और क्षण भर के लिए बुद्धि के अन्धेरे कोनों को प्रकाशवान कर जाती हैं। लेकिन इस औरत को देखकर मुझे अद्भुत प्रकार का अनुभव होता है, वास्तव में जब मैं इसे इस हालत में देखता

हूं, तो मुझे विश्वास हो जाता है कि यह औरत नहीं, बल्कि कुछ और ही शै है। अजीब कामना से भरा मुखड़ा लिए हुए इधर-उधर घूमती रहती है।

एक दिन दोपहर के समय मुझे ट्राम के अड्डे पर दिखाई दी थी, मेरा अनुमान है कि आप भी इस बाजार से कई बार गुज़रे होंगे और संभव है, आपकी निगाह उस स्त्री पर पड़ी हो, कुछ कह नहीं सकता, यह निगाह-निगाह की बात है, यह बाज़ार इस शहर का सबसे चमकीला-दमकीला और मशहूर बाज़ार है। यहाँ बड़ी बड़ी दूकानें हैं, आकाश चूमनेवाली इमारतें हैं, और बड़े-बड़े व्यापारियों की सुन्दर सजी दूकानें। यहाँ दूकानदार अपनी वस्तुओं को 'शो केस' में सजाकर रखते हैं, जिससे गाहक की नज़र उन चीज़ों पर पड़े और वह्र खरीदने पर मजबूर हो जाँय। मैं इस बाज़ार में सिर्फ इसलिए आता हूं कि इन सुन्दर चीजों को देख सकूं। मेरी जेब में इतने रुपये नहीं होते कि इन चीज़ों को ख़रीद कर पहन सकूं या इन चीजों को खरीद कर घर को सजा सकूं।

केवल दिल बहलाने के लिए इधर आ जाता हूं, पलभर के लिए ठहरता हूं और छिछलती हुई निगाह डालकर आगे बढ़ जाता हूँ। जिन्दगी में बहुत-सी इच्छाएं और अभिलाषाएं इसी तरह सीने में दब जाती हैं, और घुटकर मर जाती हैं, फिर भी दिल बहलाने में क्या हर्ज है, अगर आप इधर आयें तो दायें हाथ की तरफ़ एक-

एक आलीशान इमारत आपके ध्यान को अपनी तरफ खींच लेगी। इस दूकान के बाहर के हिस्से में बड़े-बड़े 'शो केस' लगाये गये हैं, और अलग अलग चीज़ों का बड़े अच्छे ढंग से प्रदर्शन किया गया हैं। एक तरफ औरतों के पहिनने की चीज़ें हैं, और दूसरी तरफ मर्दों के। मैं दोनों को देख लेता हूं। इन चीजों की कीमतें बहुत ज्यादा हैं। कम-से-कम मैं तो ख़रीदने से रहा, बाकी रहा अपका मामला आप इस दूकान पर जाकर चीज़ों की कीमतें पढ़ सकते हैं और अगर 'ब्लैक मार्केट' से आपने रुपये कमाये हैं, तो आप इन चीजों को ख़रीद अवश्य सकेंगे।

तो हाँ, उस दिन धूप बहुत तेज थी, दोपहर का वक्त था और मैं बाज़ार में पैदल जा रहा था। यों तो इस बाज़ार में ट्रामों, बसों और कारों की गरमा-गरमी रहती है। अमीर आदमी कारों में सैर करते हैं और ग़रीब ट्रामों और बसों में, और मुझ जैसे सिर्फ पैदल चलते हैं। उस दिन मुझे ज़रूरी काम था, इसलिये फुर्ती से कदम उठा रहा था। जल्दी-जल्दी लाल-पीले कपड़ों पर निगाह फेंकता हुआ आगे जा रहा था कि ट्राम के अड्डे पर पहुंच गया, यहां ट्रामें आकर रुकती हैं और आराम करती हैं। मुसाफिर उतरते हैं और चढ़ते हैं। मैं पैदल चलते-चलते थक गया था, ख़्याल आया कि ट्राम में बैठ जाऊँ। ट्राम में बैठने लगा था कि मेरी निगाह उस स्त्री पर पड़ी, मैंने उस औरत को देखा, और औरत ने मेरी तरफ देखा, उसे देखकर मुझे ऐसा

महसूस हुआ कि मैं इस औरत को कई बार देख चुका हूं। इस औरत को देखकर मेरे ध्यान में अजीब तरह के खयालात आयें, वह देर तक इधर-उधर देखती रही, यात्री आते और जाते रहे, कोई ट्राम में बैठता और कोई उतरता; लेकिन वह औरत इधर-उधर टहलती रही और फिर भीड़ में ग़ायब हो गई। उस औरत का चित्र अगर मैं खींच दूं, तो शायद आपके ध्यान में उसका नक्शा उभर आये। अगर औरत ख़ूबसूरत होती, तो मै उसे धनुष से उपमा देता। उसकी आंखों को कमल के फूलों की तरह बताता, उसके गालों को फूल की पंखड़ियों की तरह सुर्ख़ कर देता उसकी निगाहों में बिजली की चमचमाहट भर देता, उसके सीने में समुद्र का सारा ज्वार-भाटा पैदा कर देता, और उसके कूल्हे क़ुलोंपित्रा और डोरोथी लैमूर से ज्यादा ख़ूबसूरत दिखाता, और उसके बदन की रंगत बरफ की तरह सफेद बताता, लेकिन मेरे सामने एक दुबली-पतली सी औरत खड़ी थी, जो एक फूलोंवाली धोती पहने हुए थी, चेहरे की रंगत सम्भवतः गन्दुमी होनी चाहिये। लेकिन ज्यों-ज्यों इस औरत की उम्र बढ़ती गई, रंगत काली होती गई, गाल पिचक गये, और उन पर स्याह छाइयां उभर पड़ीं। बालों में चमक के बजाय रूखापन था। और आंखों से चिन्ता व उदासी झलक रही थी और चाल में धीमापन और कमज़ोरी आ चुकी थी। अगर उस औरत की सिर से लेकर पांव तक की जांच-पड़ताल की जाय, तो उससे साफ

प्रकट होगा कि काफी अरसे से इस औरत ने अच्छा भोजन न किया होगा भोजन की कमी के कारण बदन का आकर्षण गायब हो चुका था। एक बात, जो ध्यान देने योग्य थी, वह थी उसके होठों की लिपस्टिक, जो बहुत ही लाल थी। सारे बदन में केवल यही जगह थी, जहां खून का अनुमान हो सकता था, गालों पर (अगर उन्हें किसी प्रकार गाल कहा जा सके) पाउडर पुता हुआ था और हल्की सी लाली भी मिली हुई थी; लेकिन धूप में चलने-फिरने की वजह से पाउडर और सुर्खी इस तरह गुडमुड हो गये थे कि चेहरे की आकृति अजीब तरह की हो गयी थी। वह इस समय बिल्कुल पुरानी कार की तरह दिखाई दे रही थी, जो लगातार इस्तेमाल से अपना रंग-रूप खो बैठी हो। मैं यही कुछ सोच रहा था कि ट्राम मुसाफिरों से खचाखच भर गई और फिर चल पड़ी।

कई दिन बीत गये, मैं उस तरफ न गया। औरत की याद मेरे दिल से उतर चुकी थी, उसकी छाप धीरे-धीरे मेरे ध्यान की चादर पर मधिम पड़ती जा रही थी, आखिर मेरा और उसका रिश्ता ही क्या था? मैं क्यों उस औरत की बाबत सोचता? अगर वह कमजोर है, कुरूप है; उसे रोटी नहीं मिलती, तो मैं क्या करूं? और अगर वह ग़रीब है, तो मैं उसे अमीर किस तरह बना सकता हूं? मैं खुद भी तो ग़रीब हूं, मैं ही क्या, इस दुनिया में लाखों करोड़ों अदमी ग़रीब हैं, दुर्बल हैं, कुरूप हैं, भूखे रहते हैं,

नंगे रहते हैं। भला मैं उनकी भूख और मुफलिसी किस तरह दूर कर सकता हूं? इस दुनिया में कुछ और लोग भी हैं, जो अमीर हैं, अच्छा खाना खाते हैं, उम्दा कपड़े पहनते हैं, बड़े ठाठ-बाठ की कोठियों में रहते हैं और 'रेस' के टिकट खरीदते हैं– भला इन बातों की मेरे पास क्या दवा है?

उस दिन जब मैं घर से निकला, तो आकाश नीला और स्वच्छ था, हल्की-हल्की सी धूप थी और दिसम्बर का महीना, यही जी में आया कि घर से निकल कर टहलता-टहलता जरा बाज़ार चलूं।

आज बाज़ार में काफी रौनक थी, जरूरत से ज्यादा। पूछने पर मालूम हुआ कि आज 'क्रिसमस' है, इसीलिये लोग ख़ूबसूरत कपड़े पहने हुए इधर-उधर घूम रहे थें। उनके साथ उनकी स्त्रियां भी थीं, जो बन-ठन कर निकली थीं और अपने बच्चों को भी लाई थीं। लाल-पीले गुब्बारे पकड़े हुये हँसते खेलते हुए ये लोग दूकानों से निकल रहे थे, और चीज़ें ख़रीद रहे थे। अपनी अपनी मोटरों पर बैठ कर अपनें-अपने घरों को जा रहे थे। मैंने अपने कपड़ों पर निगाह डाली, कमींस काफ़ी गन्दी और मैली थी, कालर फट चुके थे, और बूटों पर कई हफ़्तों की गर्द जमी हुई थी। उस दिन मुझें अपनें गन्दे और मैले कपड़ों पर सख़्त गुस्सा आया। मेरे क़दम एकाएक इस आलीशान दूकान की तरफ उठ गये। 'शो केस' में कपड़े बड़ी शान

से सजाये गये थे। इधर औरतों के कपड़े थे। खूबसूरत शरीर-धारियो को रंग–बिरंगी साड़ियां पहनाई गई थीं। एक दो मुजस्सिमों (शरीर धारियों) को 'फ्रॉक' और 'ब्लाउज़' पहनाये गये थे। अधिकतर उनके उन अंगों को अधिक सजाया गया था, जिनसे औरत के सौंदर्य में वृद्धि होती है। हाथों की उंगलियाँ ऐसी जो नीचे से ऊपर को पतली होती गई हों और नाखूनों पर बला की सुर्खी, सफेद रंग पर काला ब्लाउज झूलता हुआ और उनमे से बाजू सेब की डालियों की तरह झांक रहे थे। आंखों में बिजली थी, और भौहें कमान की तरह तनी हुई थीं। हाथ में हर श्रंगार का ठाट–बाट था। यह हरी–हरी मणियों की माला थी, जो किसी सुन्दर स्त्री की गरदन के चारों तरफ घूमी हुई शोभायमान थी।

मैं अधिक देर उधार न ठहर सका और मर्दों की तरफ चला गया। सामने एक सफेद कमीज़ नज़र आई और मेरी तरफ देख कर मुस्कराने लगी। दाम पच्चीस रुपये, मुझे झटका लगा और मेरी निगाह 'मफलर' पर जमी, हल्का आसमानी रंग था उस मफलर का, मेरी गर्दन में एक झुर–झुरी सी आ गई और गरदन के इर्द–गिर्द कोमलतामय उष्णता का अनुभव हुआ, पच्चीस रुपये चौदह आने कीमत पढ़ते ही गर्दन अकड़ गई। मैं तुरन्त आगे बढ़ा। करीब ही एक जुर्राब मेरी तरफ देख कर मुस्कराई, और फिर शर्म से गर्दन झुका ली। कीमत सिर्फ

आठ रुपये पन्द्रह आने। मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे पांव में एक कांटा चुभ गया है। साथ में फैल्ट-हैट नें छींक मारी और कहने लगी–'क्या मुझे न खरीदोगे?' और मेरा हाथ एकाएक अपने बालों पर जा लगा; बाल सख्त और खुरदरे थे। हाथ अपनी जगह पर आगया, और माथे पर हल्का पसीना आ गया। इतनें में एक आदमी ने आकर कहा "प्लीज़–टू–दिस साइड" और मैं बिलकुल एक तरफ हो गया और दूकान को छोड़ कर आगे चल दिया। लोगोंके झुण्ड–के–झुण्ड आ रहे थे, वस्तुयें ख़रीद रहे थे और कारों में बैठ कर जा रहे थे; और मैं पैदल चलता हुआ ट्राम के अड्डे पर आ गया। ज्यों ही मैं ट्राम पर चढ़ने लगा कि वह औरत नज़र आई। वही फूलों वाली धोती, चलनें-फिरने की वही नाप-जोख। निगाहों में निराशा और चाल में सुस्ती और कमज़ोरी आंखें फटी–फटी, किसी को ढूंढ़नें वाली, लोगों को देखती हुई, पल भर के लिये पहचानती हुई कभी–कभी उम्मींद से लग कर अन्त में निराशा के गढ़े में गिर कर पीछे झुक जातीं। लोग ट्रामों पर चढ़ रहे थे, उतर रहे थे, और उसकी निगाहें मुसाफिरों को टटोलती हुई आगे बढ़ रही थीं, पीछे हट रही थी। उस वक्त मेरे दिल में यह आया कि आगे बढ़ कर उस स्त्रीं से बात करुं– पूछूं कि वह यहां क्यों आती है? उसका यहां क्या काम है? उसका रंग पीला क्यों है? उसकी आंखें अन्दर क्यों धंसी हुई हैं? वह क्यों बार-बार मुसाफिरों की

तरफ देखती है? यह सोच कर मैं आगे बढ़ा कि वह औरत मेरी नज़रों से ओझल हो चुकी थी। उसे न पाकर मेरे दिल में निराशा और चिन्ता के बादल उमड़ आये और ज़िन्दगी की बेबसी पर सख्त गुस्सा आया।

वह सुबह बड़ी ही मनोरम थी, आसमान नीला, और स्वच्छ था, लोग आगे-पीछे, इधर-उधर घूम रहे थे, उस वक्त सिर्फ मैं उदास था और वह औरत उदास थी।

दिन भर उस औरत का चित्र मेरी निगाहों में घूमता रहा अबकी बार मैंने फैसला कर लिया कि अगर दोबारा यह औरत मुझे मिली तो मैं उससे अवश्य बातें करूंगा, उसकी मदद करूंगा, उससे पूछूंगा कि वह क्या करती है? उसके कितने बच्चे हैं? उसका घर कहां है?

इस सोच-विचार में कई दिन बीत गये, मैं उस तरफ न जा सका, उस औरत की याद दिल से निकल चुकी थी, भला ऐसी तस्वीर कब तक दिमाग़ में रह सकती हैं; यह तस्वीरें समुद्र की लहरों की तरह होती हैं, जो सहसा बुद्धि के सामने आती हैं और बुद्धि की आड़ से टकरा कर पीछे हट जातीं हैं और बुद्धि पर एक हल्का झटका छोड़ जातीं हैं, लेकिन यह झटके इतनें कम होते हैं और इतने हल्के फुलके होते हैं कि कोई दाग़ नहीं छोड़ते,

सिर्फ हल्की-हल्की टीसें उठती हैं, जो पल भर के लिये कष्टदायक साबित होती हैं और फिर मनुष्य की बुद्धि दूसरी तरफ पलट जाती है।

जैसा कि मैंने बताया कई दिन गुज़ार गये, रातें गुज़ार गईं, स्वप्नवत् रातें। और कई सुन्दर दिन आये और चले गये, अंधेरी रातें आईं और दिल में पुरानी स्मृतियों को जगाती गईं। एक संध्या को मैं उसी तरफ से गुजरा, आज मेरी जेब में कुछ रुपये थे, इसीलिये मेरी चाल में फुर्तीलापन था। शाम के वक्त इस बाज़ार में बहुत कम भीड़ होती है, यहाँ के दूकानदार लाखों रुपयों के मालिक होते हैं, इसलिये शाम होते ही व दूकानें बन्द कर देते हैं, और अपने-अपने आनन्द-भवनों की तरफ चल देते हैं। वहां शराब होती है और उनकी गोरी-गोरी रूपवान प्रेयसियां होती हैं ये लोग उनके साथ हंसते खेलते हैं, नाचते हैं, फिर आपस में पक्के निश्चय करार होते हैं, वफादार, बेवफाई के चर्चे होते हैं, अपनी-अपनी बीबियों के कठोर बर्ताव का रोना रोते हैं और अपनी प्रेमिकाओं के कन्धों पर सिर रख कर अपनी बढ़ी हुई सम्पत्ति की चर्चा करते हैं।

आज जब मैं उस आलीशान दूकान की तरफ निकला तो उन शीशों की अलमारियों में से चन्द आदमी कपड़े निकाल रहे थे, मेरे सामने सब शीशों की अलमारियां खाली होगईं। सिर्फ "हैंगर्स" बाकी रह गये थे। कई बार मेरे दिल में आया कि किसी रात इधर आऊंगा और उन

शीशों की अलमारियों को तोड़ कर अपने लिये कपड़े ले जाऊंगा; लेकिन आज मालूम हुआ कि रात के समय कपड़े 'शो केस' में नहीं रखे जाते। इस ख़याल के आते ही मैं कुछ उदास सा हो गया और आगे बढ़ा। अन्धकार काफी हो गया था, रास्ता आवारा और अकेला दिखाई देता था, ट्राम में यात्री कम थे, दूकानों के करीब हथियारबन्द चौकीदार दिखाई दे रहे थे, यह चौकीदार मेरी तरफ घूर-घूर कर देख रहे थे, मैं उनकी निगाहों से बचता हुआ आगे बढ़ गया। आज मुझे पूरा विश्वास था कि वह औरत दिखाई न देगी, भला इस समय वह क्या करेगी आकर! एक दिन वह मुझे दोपहर को मिली थी और फिर एक बार सुबह मिली थी वह शाम को यहाँ किस तरह आ सकती है? मैं चलता-चलता उसी अड्डे के करीब पंहुच गया, ट्राम खड़ी थी, मुसाफ़िर बहुत कम थे। मैंने चढ़ने की कोशिश की; लेकिन मेरे पांव फिर रुक गये। यों ही ख़्याल आया कि वह औरत कहां होगी? और फिर मैंने इधर-उधर देखना शुरू किया जैसे कोई खोई हुई वस्तु को ढूंढ़ रहा हो। एकाएक मेरी निगाहें बिजली के खम्भे के करीब जाकर अटक गई, मेरी हैरानी का कोई अन्त न रहा, औरत उस खम्भे के समीप खड़ी थी। मैंने औरत की तरफ़ देखा और औरत ने मेरी तरफ़। औरत की निगाहों में चमक पैदा हुई और एक आग की लपट ऊंची हुई, जैसे चकमक के दो पत्थरों के टकरा जाने

से पैदा होती है, और मैं जल्दी से एक तरफ़ को हो गया। मैंने देखा, औरत की निगाहों में उदासी आ गई थी, वह चमक गायब हो गई थी और वह मरी हुई निगाहों से मुसाफ़िरों को देखने लगी। मुसाफ़िर उतर रहे थे और चढ़ रहे थे, इस वक्त मुसाफ़िर बहुत कम थे और ख़ास कर इस इलाके में रोशनी बहुत कम थी, अन्धेरा ज्यादा था। मैं औरत को अच्छी तरह देख सकता था; लेकिन औरत मुझे न देख सकती थी, मेरे दिल में खयाल आया कि उससे जाकर मिलूं, बातें करूं और पूछूं कि वह क्या चाहती है, वह इतनी उदास क्यों रहती है?

आज मेरी जेब में रुपये थे, और मैंने सोचा कि यह रुपये उसे जाकर दे दूं और कहूं कि 'आज की रात घर जाकर चुप-चाप सो जाओ, किसी गाहक का इन्तजार न करो, किसी मर्द का........'।

औरत खम्भे के नज़दीक अकेली खड़ी थी, अब उसने अपनी पीठ मेरी तरफ़ कर ली थी और मैं सोच रहा था कि वह क्या सोच रही होगी? उसकी निगाहों में क्या था? उसके दिल में क्या था? वह क्यों लोगों की तरफ बार-बार देखती है? उसका बदन क्यों पतला और दुबला है? उसकी आँखों में चमक क्यों नहीं? उसकी चाल में ताकत क्यों नहीं? उसके होठों पर मुस्कराहट क्यों नहीं? वह क्यों रोज सुबह, दोपहर, शाम इस शहर के सबसे बड़े चमक-दमक भरे बाज़ार में आती है, जहां सिर्फ सभ्य

पुरुष की पैठ होती है, जहां सिर्फ अमीरों की गुजर होती है, जहाँ ऊंचे ठाट-बाट के भवन हैं, शानदार होटल हैं। जहाँ लोग कारों में बैठ कर बाज़ार की रौनक देखते हैं। मेरे दिल में रह-रह कर यह ख़्याल आ रहा था कि ये चन्द सिक्के उसे जाकर दे दूं और उससे कहूं कि 'आज की रात आराम और चैन से बिताओ और ख़मोशी से अपने कमरे में सो जाओ।' उसका कमरा कहां होगा? वह सोती कहां होगी? मैंने सोचा और एकाएक यह विचार मेरी समझ में उठा कि अगर आज मैंने उसे रुपये दे दिये, तो कल क्या करेगी? और परसों क्या करेगी? मेरे एक दिन के दान से उसे क्या फायदा पहुंचेगा? यह उस विचारणीय विषय का हल न था। उसे फिर इसी बाज़ार में आना होगा और अपने शरीर को बेचना होगा, यह बात ध्यान में आते ही मेरी पकड़ रुपयों पर सख़्त हो गई, और मुझे अपनी ग़रीबी का ज्ञान होने लगा, मैंने निगाहें मोड़ लीं; लेकिन निगाहें फिर उसी तरफ उठ जाती थीं। वह घर क्यों नहीं जाती? वह यहां क्यों खड़ी है वह बार-बार मुसाफिरों की तरफ क्यों देख रही है। मुझे उस औरत को इस हालत में देख कर क्रोध आ रहा था और मेरा जी चाह रहा था कि मैं यहां से चला जाऊं। अजीव तरह की कुलटा औरत है, जिसे रुपयों के लिये अपना शरीर बेचना पड़ता है और रत्ती भर शर्म महसूस नहीं होती, और फिर मुझे इस बात

का ख़्याल आया कि क्या इस विशाल धरती पर कोई ऐसा देश है, जहाँ औरतों को अपना पेट भरने के लिये अपना शरीर बेचना नहीं पड़ता। समझ पर दबाव डालने के बाद मुझे ख़्याल आया कि हां है, वाक़ई है, मैंने समाचार पत्रों में पढ़ा है, मैंने किताबों में देखा है कि इस मुल्क से बहुत दूर एक और देश है, जहां ख़ूब बर्फ पड़ती है और सरदी होती है, जहाँ मज़दूरों और किसानों का राज्य है, सुना है कि इस देश में औरतों को अपना जिस्म बेचना नहीं पड़ता, जहां औरतें अनपढ़ नहीं होतीं। मर्दों की ग़ुलाम नहीं होतीं। जहां वे दफ़्तरों में काम करती हैं, हवाई-जहाज़ चलाती हैं, फ़ौज में काम करती हैं, उनका स्वास्थ्य अच्छा होता है, प्रेम करती हैं, विवाह करती हैं, बच्चे पैदा करती हैं, और बड़े मज़े से ज़िन्दगी बिताती हैं। वह देश यहां से कितनी दूर है। क्या वह व्यवस्था यहां नहीं आ सकती। और एकाएक मुझे यह ख़्याल आया कि मैं जा कर उस औरत से कहूं, कोई बात नहीं, वह दिन दूर नहीं, जब तुम्हें अपना पेट भरने के लिये इस अड्डे पर न आना होगा, अपना शरीर न बेचना पड़ेगा और देश वाले तुम्हारी इज्ज़त करेंगे, तुम्हें रोटी देंगे, तुम्हारे बच्चों को दूध देंगे, वह दिन आयेंगे। रोओ मत मेरी बहिन; वह दिन ज़रूर आयेंगे; जब तुम्हारी आंखों में आंसू न होंगे, जब तुम्हारे गालों पर छाइयां न होंगी, बल्कि प्रातःकाल की लालिमा की तरह

लाली होगी, जब तुम्हारे होंठों पर लिपस्टिक की जगह असली ख़ून दौड़ेगा, जब तुम्हारे कूल्हों में आकर्षण होगा और जब तुम्हारी आंखों में निराशा की जगह आशा के दीपक प्रज्ज्वलित होंगे। जब लोगों में इतनी ताक़त आ जायेगी तो वे नफाखोरों और चोरबाज़ारियों के हाथों से ताक़त छीन लेंगे और उसी दूर वाले देश की तरह राज्य-व्यवस्था कायम करेंगे। रोओ मत मेरी बहिन! इस अकेली रात में अकेली मत रोओ!

और मैं यह सोच कर ख़ामोश हो गया, क्योंकि बुद्धि में यह ख़्याल भी आ रहा था कि जब तक वह व्यवस्था नहीं आती, तब तक वह क्या करे।

यह सोच कर मैं ट्राम में बैठ गया, और ट्राम निर्दिष्ट स्थान की तरफ़ बढ़ी। मैंने खम्भे की तरफ निगाह उठाई, खम्भा अकेला खड़ा था, और औरत वहां से जा चुकी थी।

आइस क्रीम

जब मेरे मन की कटुता और घुटन अधिक बढ़ जाती है, तो मैं इरॉज़ सिनेमा का रुख़ करता हूँ। जब सिमेन्ट की इस शानदार इमारत की तरफ निगाह उठाता हूँ, तो हृदय में एक शक्ति और दृढ़ता का अनुभव होता है। मेरे क़दम एकाएक आगे बढ़ते हैं।

मैं सब से पहले वज़न करने वाली मशीन की ओर जाता हूँ। एक आना डाल कर वज़न का कार्ड निकालता हूँ और उस पर लिखी क़िस्मत को बड़े ध्यान से पढ़ता हूँ। वज़न उतना ही है, न बढ़ा है न घटा है, लेकिन कार्ड पर लिखे हुए शब्द बदल गये हैं। वे पहले और थे अब और हैं। लिखा हुआ है, 'कुछ समय और प्रतीक्षा करो। अच्छे दिन आयँगे।' और मै कार्ड को जेब में डाल कर चित्रों वाले बोर्ड की ओर झुकता हूँ। हालीवुड के चित्र कितने मनोहर और चिताकर्षक होते हैं! कभी-कभी तो यह विचार उठता है कि इस प्रकार के पुरुष और स्त्रियाँ इस पृथ्वी पर हैं भी या नहीं? लेकिन बार-बार जब आँखें उन चित्रों से चार होती हैं, तो विश्वास करना ही पड़ता है। यह ऐक्ट्रेसें कितनी स्वस्थ और सुन्दर हैं! हमारी

अभिनेत्रियों की तरह नहीं, जो देखते ही देखते फूल कर कुप्पा हो जाती हैं या दुर्बल होने पर आती हैं, तो सूख कर काँटा हो जाती हैं। अमेरिका वालों ने स्त्रियों के सौंदर्य से स्वास्थ्यप्रद आनन्द उठाने के विभिन्न ढंग अपना रखे हैं। वे स्त्री के सौंदर्य को छिपाते नहीं, उसकी सुन्दरता पर पर्दा नहीं डालते, बल्कि नारी-शरीर की सुन्दर रेखाओं को सुन्दर ढंग से प्रदर्शित करते हैं।

डोरोथी की सुन्दर टाँगों और रानों को देखकर सारा संसार आनन्दित होता है। किसी अभिनेत्री के केशोंको रेशमी बनाकर, उसके भरे हुए कन्धों पर बिखरा कर वे इतना आकर्षक नक़्शा बनाते हैं कि उसके रेशमी केशों को देख कर मन में एक नींद सी आ जाती है। हालीवुड के विशेषज्ञ भली भाँति जानते हैं कि प्रत्येक पुरुष, स्त्री के सुन्दर शरीर को देखकर प्रसन्न होता है। इसीलिये वे स्त्री की छातियों, उसके कूल्हों, उसके बालों, उसकी मुस्कराहट, उसकी आँखों, उसकी लम्बी-लम्बी उंगलियों, उसके भरे हुए होंठों, उसकी सुराहीदार गर्दन और उसके शरीर को विभिन्न कोणों से उजागर करते हैं।

मैं देर तक उन मूक चित्रों को देखता रहता हूँ और फिर स्वच्छ चमकते हुए फ़र्श पर धीरे-धीरे क़दम उठाता हूँ। फ़र्श ख़त्म होता है, तो सीढ़ियों की ओर रुख़ करता हूँ। धीरे-धीरे सीढ़ियाँ चढ़ने लगता हूँ और दीवारों पर लगे चित्रों को देखता जाता हूँ। सफाई और सुन्दरता

ज़िन्दगी में ज़िन्दा रहने की इच्छा उत्पन्न करती हैं।

दाहिनी दीवार पर एक सुन्दर स्त्री का चेहरा मुस्करा रहा है। यह चेहरा कह रहा है– 'मैं सुन्दर हूँ। मेरे रेशमी बाल देखो! मेरे सुन्दर मुखड़े को देखो! मेरी आँखों में ताज़गी है, मेरी निगाहों में चमक है! मैं ख़ूब खाती हूँ, ख़ूब पीती हूँ! मैं बसन्त से प्रेम करती हूँ, समुद्र से प्यार करती हूँ, स्वस्थ पुरुष को चाहती हूँ! इन आँखों में धोखा कम है, झूठी नैतिकता का खोल नहीं, जीवन में प्रसन्न रहने की आकांक्षा है!'

अब सीढ़ियाँ ख़त्म हो गई हैं और मैं ऊपर वाले हाल में पहुँच जाता हूँ। इस हाल में बहुत सी कुर्सियाँ हैं, चमकती हुई मेजें हैं। दीवारों पर ऐक्टरों और ऐक्ट्रेसों के चित्र हैं। ऐक्ट्रेसों के अधिक और ऐक्टरों के कम। आज गर्मी बहुत अधिक है। मैं पंखे के नीचे एक कुर्सी पर बैठ जाता हूँ और फिर चुपके से, ख़ामोशी से एक बैरा आता है साफ और स्वच्छ कपड़ों में। मैं उसे आइस–क्रीम का आर्डर देता हूँ।

आइस क्रीम सचमुच स्वादिष्ट चीज़ है, और विशेष कर इस गर्मी के मौसम में। मुंह में डालो और तुरन्त गले से उतरती हुई पेट तक एक शीतल अनुभूति जाग उठती है। देखने में भी क्रीम सुन्दर है। एक छोटा गिलास का कप है। उसमें आइस क्रीम रखी हुई। ऊपर का थोड़ा सा हिस्सा सुर्ख़ और नीचे से सफेद और मुला-

यम, बिलकुल औरत के गालों की तरह, स्वस्थ स्त्री के गालों के समान। कहीं-कहीं सुर्खी अधिक और कहीं-कहीं कम। और मैं धीरे धीरे क्रीम को चमचे से मुंह में डालता हूँ और उसके शीतल स्पर्श से आनन्दित होता हूँ। हाल में पुरुष आते हैं, स्त्रियाँ आती हैं। अभी एक जोड़ी दाखिल हुई है। दोनों अँग्रेज़ हैं। दोनों पश्चिमी वेष-भूषा में हैं। स्त्री फ़्राक पहिने है। उसकी सुन्दर पिंडलियाँ, उसका सुडौल शरीर, उसकी खुली बाँहें, उसके बालों का कन्धों पर बिखर जाना अजीब प्रभाव डालता है हृदय पर। पुरुष स्त्री की कमर में हाथ डाले हुए है और स्त्री मुस्करा मुस्करा कर उसकी ओर देख रही है। हाल मे बैठे हिन्दुस्तानियों की निगाहें इस जोड़ी की ओर बार-बार उठ रही हैं। पुरुष एक कुर्सी धीरे से पीछे करता है। स्त्री उस पर बैठ जाती है। पुरुष फिर कुर्सी को आगे कर देता है और स्वयं साथ वाली कुर्सी पर बैठ जाता है। बाहों को कोहनियों से मेज़ पर टेक कर अपनी प्रेमिका की ओर प्यार भरी दृष्टि से देखता है। बैरा आता है और पुरुष आइस क्रीम का आर्डर देता है।

और मैं धीर-धीरे आइस क्रीम खा रहा हूँ। जेब में केवल एक प्लेट आइस क्रीम के पैसे हैं। यदि मैंने जल्दी से इस आइस क्रीम को खा लिया, तो मुझे दूसरी प्लेट का आर्डर देना पड़ेगा। और मैं तो केवल समय बिताने के लिये आता हूँ। क्योंकि जहाँ मैं रहता हूँ, वह काफ़ी

गन्दी जगह है। यद्यपि देखने में वह बिल्डिंग इतनी गन्दी नहीं, लेकिन जैसे ही आप बिल्डिंग में प्रवेश करते हैं कि गन्दगी आपका स्वागत करती है। दुर्गन्ध से दिमाग़ बोझिल हो जाता है और जल्दी से सीढ़ियाँ चढ़ने लगता हूँ। ये सीढ़ियाँ संगमरमर की हैं किन्तु अत्यधिक गन्दी सीढ़ियाँ हैं। इन पर अक्सर पानी का छिड़काव होता है जिससे कि लोगों को फिसलने में आसानी हो और वे बाज़ू या टाँग को ज़ख़्मी कराके किसी अस्पताल में जा सकें। एक बार मैं भी इन्हीं सीढ़ियों से गिर चुका हूँ। ऊपर की सीढ़ी से गिरा था और निचली सीढ़ी तक लुढ़कता हुआ पहुँच गया था। मेरे बायें बाज़ू पर गहरी चोट लगी थी। लगातार एक महीने अस्पताल में रहा और इलाज कराता रहा। बाज़ू तो ठीक हो गया, लेकिन अभी तक दर्द बाक़ी है। और अब जब कभी सीढ़ियाँ उतरता हूँ, तो ऐसा लगता है मानो ज्वालामुखी पर्वत की चोटी से नीचे उतर रहा हूँ। बड़ी सावधानी से क़दम रखता हूँ, लेकिन फिर भी गिरने की आशंका बनी रहती है।

अभी अभी दो लड़कियाँ दाख़िल हुई हैं। इनके साथ केवल एक युवक है। दोनों साड़ियाँ पहिने हुए हैं। इन लड़कियों को सचमुच साड़ी पहिनने का ढंग आता है। कई लड़कियाँ तो केवल साड़ी लपेटना जानती हैं, जैसे मुर्दे को चादर लपेट दी जाय। किन्तु इन लड़कियों ने सचमुच साड़ी को इस अन्दाज़ से लपेटा है कि शरीर का

सारा सौन्दर्य उजागर हो गया है। और ब्लाउज़ का कट कितना सुन्दर है! गर्दन का पिछला भाग कितना सुन्दर लगता है! पेट का निचला भाग भी खुला है। और दूसरी लड़की ने जूड़ा कितनी मेहनत से तैयार किया है! लगता है कि इस लड़की ने अपनी आशाओं, आकांक्षाओं को इस सुन्दर जूड़े में बुन दिया है। बिल्कुल उस काश्मीरी कारीगर की भाँति जो अपने हाथों के कौशल से शाल पर रेशम के फूल काढ़ता है।

तीनों एक मेज़ के गिर्द बैठ जाते हैं और बैरे को आइस क्रीम का आर्डर देते हैं। और मेरा ध्यान फिर अपने घर की ओर लौटता है। इस तरफ़ एक कमरा है। यहां मोची रहते हैं। एक कमरे में लगभग बीस मनुष्य रहते होंगे। ये लोग घर में जूते तैयार करते है और बाज़ार में जाकर बेचते हैं। इन मोचियों ने विवाह कर लिये हैं और इनके बाल-बच्चे इसी कमरे में रहते हैं। ये सब लोग सोते कहाँ हैं? इनका ड्राइंग रूम कौन सा है? इनका मेहमान खाना कौन सा है? इनका रसोई-घर कौन सा है? ये आराम कहाँ करते हैं? इसका मुझे ज्ञान नहीं। मैं अक्सर इनकी स्त्रियों को देखता हूँ। वे अक्सर दिन के समय बाहर सड़क पर चारपाई डालकर बैठ जाती हैं और एक दूसरे का सिर देखती हैं। उनके बच्चे नंग-धड़ंग सड़कों पर खेलते रहते हैं। बच्चे काफ़ी कमजोर और दुबले दीखते हैं। स्त्रियां मोटी तथा भद्दी

हैं। महीने में एक दो बार नहाती हैं। इनके बच्चे न स्कूल जाते हैं और न हमारी सरकार ही उनका कुछ ख़्याल करती है। यदि बाप मोची है तो बेटा भी ज़िन्दगी भर मोची रहेगा और इसी खोली में जीवन बिता देगा।

इस कमरे के साथ एक और कमरा है। यहाँ दस बारह 'भैया' रहते हैं। काफ़ी हट्टे कट्टे और जवान। बिल्कुल स्वस्थ दिखाई देते हैं। उनको सफ़ाई का ख़्याल नहीं। उनमें हर आदमी का एक ट्रंक होता है, जिसमें उसके जीवन की सारी पूंजी जमा रहती है। कमरे में एक रस्सी लटकी है, उस पर उनकी धोतियाँ लटकी रहती हैं। उनकी स्त्रियाँ कहाँ रहती हैं? उनके बच्चे कहाँ हैं? इनका गृहस्थ जीवन क्या है? इसका मुझे पता नहीं। ये लोग सुबह सवेरे उठते हैं, और नहा धोकर चले जाते हैं। दोपहर को वापस आते हैं। अपने चूल्हे पर भोजन पकाते हैं। भोजन करके अपना अपना बिस्तर फ़र्श पर लगाते हैं और एक मैली धोती पहिन, उस बिस्तर पर आराम करते हैं। शाम को यह भैया फिर बाहर निकल जाते हैं और रात को आठ नौ बजे वापस आते हैं, भोजन करते हैं और सो जाते हैं।

ये लोग वेश्याओं से सख़्त नफ़रत करते हैं। मुसलमानों के साथ मिल बैठकर भोजन नहीं करते। जब पूर्णिमा का चाँद निकलता है, तो इस बिल्डिंग के सारे 'भैये' नीचे के सहन में जमा होते हैं। एक पंडित को बुलवाते हैं और

उससे कथा कराते हैं। एक बार मैं भी इस कथा में शामिल हुआ था। नीचे सहन में बहुत गर्मी थी। सण्डास खुले हुए थे और दुर्गन्ध से मस्तिष्क बोझिल हो गया था— अजीब बदबू आती है इन जगहों में। रात भर राम नाम का जाप होता रहा। सीता और राम के क़िस्से होते रहे। रावण को गालियाँ मिलती रहीं और लक्ष्मण और सीता की तारीफ होती रही। सदियों से इस तरह की कथायें हो रही हैं लेकिन इन लोगों में अभी सफ़ाई का ख़्याल पैदा नहीं हुआ। राम नाम को जपते हुए, टाँगों को खुजलातें है। जीवन की मनोहर अनुभूतियों से बहुत दूर ज़िन्दगी शुरू करके फिर उसी गन्दगी और बदबू में मर जाते हैं।

कभी कभी मैं सोचता हूँ कि इन लोगों ने कभी लेनिन और स्टालिन का नाम सुना है या नहीं।

मेरे कमरे के साथ में एक और कमरा है। उसमें एक नाचने वाली रहती है। काली, सियाहफाम। उसका बाप कुछ नहीं कमाता। उसकी माँ बूढ़ी है। उसके दो छोटे भाई और चार बहनें हैं। सिर्फ बड़ी लड़की कमाती है। नाच कर, लोगों के मन लुभाकर, कूल्हे मटका कर रुपये लाती है और ये सब मिल बैठ कर खाते हैं। बाप काफ़ी हट्टा-कट्टा है, लेकिन घर से बाहर नहीं निकलता। बूढ़ी स्त्री को जवान बनने का बहुत शौक़ है। वह हमेशा भड़कीले फ्राक पहनती है, लिपस्टिक लगाती है और बालों में जाली लगाकर बिल्डिग में घूमती रहती है। जब

लड़की की आमदनी अधिक होती है, तो ये लोग शराब पीते हैं, गाते हैं, ग्रामोफोन पर रिकार्ड सुनते हैं। एक बार यह लड़की एक लौंडे के साथ भाग गई थी। माँ उसे फिर पकड़ कर ले आई। अब वह लड़की फिर यहीं रहती है। जहाँ मैं रहता हूँ, यह बहुत बड़ी बिल्डिंग है, लेकिन यहाँ एक एक कमरे का फ्लैट है। इस बिल्डिंग में लगभग पचास कमरे हैं।

उधर के एक कमरे में पठान रहते हैं। सब के सब सूद खाने वाले। इनका जीवन में बस एक धंधा है। लोगों को रुपया देना और डंडे तथा मार पीट से सूद लेना। ये दफ्तर के क्लार्कों और मिल के मजदूरों को सूद पर रुपया देते हैं। पाकिस्तान बनने से पहले इनका काफ़ी रोबदाब था, किन्तु अब परिस्थिति बदल चुकी है। अब वह अकड़-फूं नहीं है। ये लोग भी मौक़े की नज़ाकत को समझ कर चुप बैठ गये हैं, किन्तु सूद लेने का चस्का इतना पड़ा हुआ है कि ये इस धन्धे को छोड़ना नहीं चाहते इस बिल्डिंग में मुसलमानों की संख्या अधिक थी, किन्तु अब मुसलमान धीरे धीरे जा रहे हैं। उनकी जगह पंजाबी और सिन्धी आ रहे हैं। पंजाबियों और पठानों में अक्सर ठन जाती है। लोग इन्हें गालियाँ देते हैं और ये लोग ख़ामोशी से गालियाँ सुन लेते हैं। रुपये का लालच आदमी को कितना ज़लील करता है, मैंने जीवन में पहली बार इस बात का अनुभव किया है।

और उस कमरे से ज़रा आगे बढ़ो, तो एक बूढ़ी वेश्या का कमरा मिलेगा। चालीस के क़रीब होगी इस वेश्या की अवस्था। अट्ठारह वर्ष से यह स्त्री इस जगह पेशा कर रही है, लेकिन बन ठन कर रहने की आरज़ू अभी तक कम नहीं हुई। एक बोहरा इसे ढाई सौ रुपया महीना स्थायी रूप से देता है। वह यहाँ कभी नहीं आता, बल्कि यह स्वयं महीने में एक बार उसके पास चली जाती है। इस वेश्या ने एक छोकरा रख छोड़ा है। उसे खाना खिलाती है, कपड़े सिला कर देती है, जेब ख़र्च देती है, उसकी अच्छी तरह देख भाल करती है। यह छोकरा दिन भर घर में रहता है, ख़ूब शराब पीता है, और जवान छोकरियों को ताड़ता है, मोचिनों से इश्क़ लड़ाता है और भद्दे फिल्मी गीत गाता है।

यह छोकरा अक्सर शाम के वक्त सामने वाली सड़क पर नहा धोकर, एक चमकीली क़मीज़ और एक पैन्ट पहिन कर खड़ा हो जाता है। बालों को माथे पर फैला कर बड़े मज़े से सिगरेट का कश लगाता है।

अब तो मेरी आइस-क्रीम थोड़ी सी रह गई है। शायद सोचते सोचते जल्दी खा गया हूँ। वह अँग्रेज़ जोड़ी अभी तक बातें कर रही है और दो लड़कियों और एक युवक वाली मेज़ तो अब ख़ाली हो चुकी है और वहाँ दो योरोपियन स्त्रियाँ बैठी हुई हैं। दोनों अधेड़ दिखाई पड़ती हैं। गदन का मांस लटक गया है। जब मुस्कराती हैं, तब

झुर्रियाँ साफ दिखाई पड़ती है। उन्होंने अपने सिरों पर सुर्ख़ रूमाल बाँध रखे हैं और उनकी लम्बी लम्बी बाहें, जिन पर बुढ़ापे की छाप लग चुकी है, दिमाग़ पर अजीब सा दबाव डाल रही हैं। वे बार बार शीशे में अपना चेहरा देखती हैं और अपने बैग से लिपस्टिक निकाल कर होठों पर लगाती हैं और बार बार अपने चेहरे को पफ़ से साफ़ करती हैं। लेकिन बुढ़ापा उनका पीछा नहीं छोड़ता। इतना पौडर और लिपस्टिक लगाने पर भी बुढ़पा अपने जोबन पर है। छिपाये नहीं छिपता। वे बार बार सीढ़ियों की ओर देखती हैं। शायद उन्हें किसी का इन्तज़ार है। इस आयु में ग्राहक का इन्तज़ार करना कितना बीभत्स लगता है!

मेरी निगाहें उस मेज़ से हट जाती हैं और मस्तिष्क फिर अपनी बिल्डिंग की ओर छलाँग लगता है और मुझे एक आर्टिस्ट के कमरे की ओर लें जाता है। यह आर्टिस्ट का अजीब ग़रीब कमरा हैं। कमरे में नंगी स्त्रियों के चित्र हैं। सामने की मेज़ पर एक नग्न स्त्री की मूर्ति है, जिसके शरीर की सुन्दरता सचमुच अद्वितीय हैं। आर्टिस्ट ने उस मूर्ति पर एक जालीदार कपड़ा चढ़ा दिया है। इसनें एक कुरूप स्त्री से विवाह कर लिया है। यह पत्नी को अपने घर नहीं लाता। आजकल इसकी पत्नी गर्भवती हैं इसलिये उसनें उसे एक अस्पताल में भर्ती करा दिया हैं। यह आर्टिस्ट पर्दों पर तस्वीरें बनाता है, फ़िल्म कम्पनियों के सेटिंग, सीनरी तैयार करता हैं, दिन रात शराब पीता

है और एक्स्ट्रा लड़कियों से प्रेम करता है।

और कभी कभी मैं सोचता हूँ कि इस बिल्डिंग में एक ऐसा आदमी नहीं, जो सुन्दर हो, जिसे सुन्दर कपड़े पहिनने का शौक़ हो, जो एक कमरे की जगह एक हवादार मकान रहने के लिये खोज रहा हो। इस बिल्डिंग में एक भी ऐसा आदमी नहीं, जो मार्क्स के नाम से परिचित हो, जो लेनिन को जानता हो। ऐसे आदमी ज़रूर हैं, जो गाँधी और जवाहर लाल के नाम से परिचित हैं। लेकिन उन्हें यह मालूम नहीं कि गाँधी ने हिन्दुस्तान के लिये क्या किया। सिर्फ अन्ध-भक्त हैं और कुछ नहीं। गाँधी को क्यों क़त्ल किया गया, इसका किसी को पता नहीं। अक्सर इन लोगों की आँखों में आँसू आ जाते हैं जब ये लोग 'बापू की अमर कहानी' का रिकार्ड सुनते हैं। लेकिन रिकार्ड सुन कर रो-धो कर, खाना खाकर, एक मैली सी धोती पहिन कर ये लोग सो जाते हैं। इन लोगों ने न टैगोर का नाम सुना है और न इक़बाल या निराला का। न प्रेमचन्द को जानते हैं न कृष्णचन्द्र को। ये लोग न अच्छा खाना जानते हैं, न अच्छा खाने का ख़्याल करते हैं।

यह लोग शायद इधर नहीं आते। इस इलाक़े की तरफ, जो चर्चगेट से शुरू होता हुआ मालाबार हिल की तरफ चला जाता है। यह इलाक़ा, जहाँ सुन्दर फ़्लैट हैं, बड़ी बड़ी शानदार कोठियाँ हैं। यह इलाक़ा, जहाँ मेट्रो है, जहाँ पेरीज़ान डेरी है, जहाँ होटल दलिमियार है। ये लोग इधर आने की इच्छा क्यों नहीं करते, क्यों अपने बिलों

में दिन-रात घुसे रहते हैं? यहाँ सजी हुई दूकानों हैं, चमकता हुआ फर्श है, साफ, स्वच्छ हवा है, गन्दगी और दुर्गन्द का नाम नहीं, कमरे साफ और चमकदार है। इधर ड्राइंग रूम है, इसमें सोफा सेट है, सिगार-मेज़ है। यह आरास करने का कमरा है, यह स्प्रिगदार पलंग है, ये रेशम के तकिये हैं, ये रेशम की चादरें हैं, यह रंगीन पर्दा है और यह खाने का कमरा है, ये प्लेटे हैं, ये प्यालियाँ हैं, यह डिनर सेट है, यह टी सेट है। ये कुर्सियाँ हैं, मेजे हैं, तिपाइयाँ हैं और यह सण्डास साफ़ और सुथरा। यह नहाने का टब, यह एलेक्ट्रिक मशीन! यह जगह, ये कमरे, ये स्त्रियाँ, ये पुरुष और ये कारें! ये सब सुन्दर हैं। इनके पास लाखों रुपये हैं, इन्हें कल की चिन्ता नहीं होती। इनके लड़के इंगलैंड और पेरिस में शिक्षा प्राप्त करने जाते हैं, जलवायु परिवर्तन के लिये स्वीटज़रलैंड जाते हैं और यदि कभी बीमार हो जाँय, तो दो दो नर्सें बुलाते हैं और यदि इस बीच किसी नर्स से आँख लड़ जाय तो फिर वह रोगी कभी अच्छा नहीं होता। नर्स भी घर में और रोगी भी घर में। इन लोगों की पत्नियाँ होती हैं और साथ ही दूसरी स्त्री के साथ इनके रोमांस भी चलते हैं। धर्म और अधर्म दोनों साथ साथ चलते हैं। ये लोग सदैव अच्छा भोजन करते हैं, इसीलिये इनके चेहरों पर ताज़गी होती है, निगाहों में ज़िन्दगी होती है, चालाकी होती है, मक्कारी होती है। इसीलिये ये दूसरों को अपनी

महफिल में शरीक नहीं होने देते, सिर्फ अपने लिये कमाते हैं, स्वयं खाते हैं और ऐश करते हैं।

अब तो मेरी आइस क्रीम सचमुच ख़त्म हो गई है। आइस क्रीम की अन्तिम पिघली हुई बर्फ मैंने मुंह में डाल ली है। मैं इधर आ जाता हूँ। अब तो यहाँ सुन्दर स्त्रियों का जमघटा है, सुन्दर पुरुषों का जमघटा हैं, सुन्दर चित्रों·····को देख कर आशा निराशा की लहरें मन में दौड़ने लगती।

और कभी कभी यह सोचता हुँ कि जिस जगह मैं रहता हूँ, क्या उस बिल्डिंग के लोग यह जीवन न देख सकेंगे? क्या ये लोग मनुष्य नहीं? इनमें और उनमें क्या अन्तर हैं? क्या इस तरह वे इन आलीशान महलों में नहीं रह सकते? क्या उन्हें इस तरह रहने का अधिकार नहीं? यही सोचता हुआ मैं सीढ़ियाँ उतरने लगता हूँ और जल्दी जल्दी कदम उठाता हुआ भीड़ में खो जाता हूँ।

तपस्या

ऐसा क्यों कर हुआ? वह सोचने लगा। उसके दिमाग़ नें पन्द्रह वर्ष पूर्व की ओर छलाँग लगाई। जब वह बीस वर्ष का था और घर से भाग कर आया था, तब भी यही प्लैटफ़ार्म था, यही रेल की पटरी थी, मुसाफ़िर इसी तरह इधर उधर भाग रहे थे, कुली इसी तरह 'कुली, साहब, कुली चाहिये, कुली?' पुकार रहे थे। अब भी उसी तरह एक अँग्रेज़ और उसकी पत्नी हाथ में हाथ डालें प्लैटफार्म पर आने वाली गाड़ी का इन्तज़ार कर रहे थे। यही सोचते सोचते वह अपनी अंगुलियों से सिर खुजलाने लगा और स्मृति के चौखटे में अतीत की धुँधली छाया उभरनें लगी।

....

भैरव जी का मन्दिर एक टीले पर केलों के झुण्ड से घिरा हुआ था। उसका वृद्ध पिता मन्दिर का पुजारी था। लेकिन वास्तव में वृद्ध पिता ने मन्दिर का सब काम अपने युवक पुत्र को सौंप दिया था। मन्दिर के दालानों में झाड़ू देना, नहा धोकर मूर्ति के लिए गंगा जल रखना, मूर्ति को सिन्दूर लगाना, प्रसाद बाँटना, दक्षिणा समेटना, युवती स्त्रियों की ओर ताकना, ग़रज़ यह कि एक चतुर पुजारी के

जितने भी काम थे, उन्हें वह बड़ी दिलचस्पी से किया करता था।

उसका वृद्ध पिता अपनी आत्मा को पापों के भार से बाचाने के लिये अक्सर उससे कहा करता था—"बेटा, हम मन्दिर के पुजारी हैं, इसकी मर्यादा और पवित्रता के रक्षक। हमारी दृष्टि में भी सत्यता, सम्मान और पवित्रता होनी चाहिये। तुम अभी जवान हो। जब स्त्रियाँ मन्दिर में आया करें, तो सदा निगाह नीची रक्खा करो।"

लेकिन पिता के इस कहने पर भी न जाने उसके हृदय को क्या हुआ था! वह स्त्रियों पर ललचाई हुई निगाहें डालने से चूक न सकता था। उन स्त्रियों में उसे एक लड़की तो विशेष रूप से पसन्द थी। उसके कपड़े सादे और साफ होते थे। आँखों में एक विशेष मस्ती थी। वे नयन थे या तालाब के नीले जल के तल पर खिले हुए दो कमल के फूल! उसे उस मन्दिर में आते जाते थोड़े ही दिन हुए थे, लेकिन उसे जान पड़ता था, मानो वह उसे दीर्घ काल से जानता है, सदा से जानता है; शायद पूर्व जन्मों से वे एक दूसरे के साथ रहे हैं।

कभी कभी वह सोचता कि ऐसा सोचना भी पाप है। उसे अपने पिता के शब्द याद आ जाते, और वह सोचता मैं मन्दिर का पुजारी हूँ। मुझे इन पापों से बचना चाहिये। मन को कुविचारों से दूर रखना चाहिये। यदि मेरे पिता को पता लग गया, तो वे मुझे मन्दिर ही से नहीं, बल्कि

घर से भी निकाल देंगे। लेकिन क्या करे? उसका मन और उसकी आँखें उसके वश में न थीं। उसको अपने पाप का हल्का हल्का अनुभव अवश्य था, लेकिन वह जितना इस पाप के अनुभव से दूर भागता, उतना ही वह उसके निकट होता जाता। बहुधा जब वह मन्दिर में न आती, तो वह बेचैन हो जाता और उसका हृदय एक अज्ञात बोझ से बैठ जाता। और फिर जन्माष्टमी के दिन उससे कितनी भूल हुई! वह कई दिन से मन्दिर में न आती थी, और वह प्रतीक्षा करते करते पागल सा हो गया था। वह रह समय यही इच्छा करने लगा था कि वह आये, तो उसे अपने बाहु पाश में खींच कर उसके ओठ चूम ले। वे ओठ, जो लाल की भाँति चमकते थे। वह सदा अपने आप को इस इरादे से बाज रखने की कोशिश करता, लेकिन असफल रहता।

जन्माष्टमी की रात को उसने मन्दिर में कृष्ण जी के लिये झूला डाला। आज उसने बड़ी मेहनत से झूले को सजाया था। भाँति भांति की रेशमी साड़ियों से, भांति भांति के फूलों से, सरसराते हुये रेशमी कपड़ों से– आज कृष्ण जी का जन्म दिन था। आज भी उसे किसी का इन्तज़ार था। वह किसी की प्रतीक्षा में घड़ियाँ गिनने लगा। आज कृष्ण का जन्म दिन है। वह आज ज़रूर आयेगी। उसका मन एक अज्ञात हर्ष से उछलने लगा। आज रात के बारह बजे कृष्ण भगवान् जन्म लेंगे, और

आज वह अवश्य आयेगी। लेकिन वह अभी तक नहीं आई थी। मन्दिर दर्शन की लालसा रखने वालों से भर गया था। ग्यारह बज गये, लेकिन वह न आई। लोग उसका झूला देख कर दूसरे मन्दिरों में झूले देखने के लिये जा रहे थे।

पौने बाहर बज गये थे। लोग बड़े बड़े मन्दिरों में सुनहले झूले देखने के लिये चले गये थे। मन्दिर सुनसान और वीरान था। वह आज भी नहीं आई थी। उसका मन निराशा से बैठनें लगा। वह आज नहीं आयेगी। कितना पागल था वह! इस पवित्र स्थान में वह इस प्रकार की बातें कर रहा था। उसे लज्जा आनी चाहिये।

बारह बज गये। वह कृष्ण जी के जन्म की प्रसन्नता में शंख फूँकने लगा, और घण्टे बजाने लगा। आरती करते समय उसनें अनुभव किया कि उसके पीछे खड़ा आरती में उसका कोई सहयोगी भी था। वह आँखें बन्द किये हुये आरती कर रहा था। लेकिन मुड़ कर और आँखें खोल कर वह अपने पीछे खड़े हुये साथी को देखना चाहता था। कौन है वह? उसका हृदय जोर ज़ोर से धड़कने लगा, और आरती समाप्त होने के बाद उसने एकदम मुड़ कर देखा। हाँ, वही थी! अज्ञान, अल्हड़ और प्रसन्न! बिल्कुल सोनें की मूर्ति! उसके हृदय की धड़कन और भी तेज़ हो गई। अब आरती समाप्त हो चुकी थी, और वह मंदिर की परिक्रमा कर जा रही थी। मन्दिर सुनसान था।

मूर्ति मौन थी। रात्रि के बाहर बजे–वह दबे पाँव उसके पीछे चला, और फिर एकाएक उसने उसे अपनी बाहों में भर लिया।

युवती ने अपने आपको छुड़ाना चाहा, लेकिन उसकी पकड़ और भी मज़बूत होती गई। युवती ने ज़ोर से एक चीख़ मारी, और फिर एक ज़ोर का चाँटा उसके गाल पर पड़ा। वह अलग खड़ा हो गया। उसका वृद्ध पिता उसके सामने खड़ा था। वह लज्जा से पानी पानी हो गया। उसे अनुभव हुआ, मानो आकाश सिर से उठ गया हो, मानो पृथ्वी पैरों के नीचे से सरक गई हो। उसके पिता ने क्रुद्ध दृष्टि से उसकी ओर देखा और कहा–"तुम मन्दिर के पुजारी बनने के योग्य नहीं हो। तुम्हारी आत्मा पतित हो गई है। तुरन्त इस मन्दिर से निकल जाओ।

"बाबा, मुझे क्षमा कर दो।"

"इसके पहिले कि नगर-निवासी तुम्हें अपमानित करके इस मन्दिर से बाहर निकल दें, तुम्हें चाहिये कि तुम स्वयं इस स्थान से चले जाओ; इस नगर से दूर हो जाओ। अपने पाप का प्रायश्चित करो। भगवान् की पूजा करो और अपने मन को इन अपवित्र विचारों से बचाओ।"

उसके पिता ने ये शब्द काँपते हुये स्वर में कहे थे।

तब वह घर से भाग निकला था। सीने में एक पराजित हृदय लिये हुये। इधर उधर अरसे तक घूमता रहा था,

और अब इस इलाक़े में आ निकला था। उसका पेशा ही क्या था! बेकार हीं तो था वह। एक ही धन्धा जानता था, और अब उसने निश्चय कर लिया था कि वह एक साधु बन जाय। उसके पूर्वज इस कला में निपुण थे। तो फिर वह क्यों उस कला से, जिसमे उसे विशेष निपुणता प्राप्त थी; लाभ न उठाता? साधु बननें से उसे रोटी अवश्य मिल जायगी, और शायद वह उस युवती को भी भूल जायगा। उसने एक लम्बा कुरता पहिन लिया, और इलाक़े भर में घूमने लगा। उसने मन में ठान लिया था कि अब वह अपना जीवन सुधारेगा, और एक सच्चे साधु की तरह जीवन बितायेगा।

वह तपस्या का जीवन बितानें लगा। इस साधु-जीवन में उसे कितने कष्ट उठाने पड़े! वह बहुत कम बार ज़मीन पर सोया था। अब नित्य ज़मीन पर सोना पड़ता था। वह पौ फटने से पहिले उठता, और बाहर जंगलों में घूमने के लिये चला जाता। कभी कभी लोगों को दिखाने के लिये गीता और रामायण का पाठ भी कर लेता था। इस इलाके के लोग कितने सीधे साधे थे! उसकी हर बात मान जाया करते थे। अब तो उसके बाल भी लम्बे हो गये थे, और अब वह बिल्कुल जटा-धारी साधु प्रतीत होता था–एक महान् साधु! लोगों ने उसके रहनें के लिये एक झोपड़ी सी बना दी थी, और उसने इस झोपड़ी के चारों ओर फूलों का एक छोटा बगीचा भी लगा लिया

था। अब वह एक लम्बा तिलक लगाया करता, और सबेरे शाम धूनी रमाया करता। आस पास के गावों के लोग सबेरा होते ही उसे प्रणाम करने के लिये आ जाते थे। कोई उसे आटा दे जाता, कोई फल, कोई सुन्दर फूल, कोई पैसे-जो फूलों से भी अधिक सुन्दर होते हैं। वह कोई ऐसा वैसा साधु तो था नहीं जो लोगों के मन पर अधिकार न कर सकता। धीरे धीरे उसकी धूम आस पास के इलाकों और गाँवों में पहुँच गई। – "यहाँ एक ज्ञानी महात्मा आये हुये हैं। बड़े भक्त हैं!"

माताएँ अपने बच्चों को लेकर उसके पास आती थीं, और अपने रोगी बालकों के लिये उससे आरोग्य का वरदान माँगती थीं। धूनी से राख की एक चुटकी उन्हें दे दिया करता था और वे अच्छे हो जाते थे। लोग कहते-"बाबा, आपकी चुटकी तो अमृत है!"

वह लोगों को बड़े काम की बातें बताया करता। अक्सर लोग उससे पूछते – "बाबा, परमात्मा कहाँ है?" तो वह कह दिया करता-"ऊपर, आकाश पर, हर जगह, मानव हृदय में।"

कई लोग पूछते-"बाबा, आपने परमात्मा को देखा है?" वह इन बातों का क्या उत्तर दे सकता था? अभी तक न तो उसने भगवान् को देखा था, न पाया था। लेकिन वह कह दिया करता-"जब मैं रात को

समाधि लगाता हूँ, तो साक्षात् परमात्मा मुझे दर्शन देते हैं।" लोग यह सुन कर उसकी ओर आश्चर्य से ताकते, और फिर उसके चरण छू लेते, तथा उसके चरणो की धूल माथे पर लगा लेते।

अब उसे इस इलाक़े में आये हुये चार पाँच वर्ष हो चुके थे। वह उस सुन्दर युवती को किसी हद तक भूल चुका था। हृदय का घाव भर चुका था, यद्यपि निशान अभी बाकी थे। उसने सोचा—वह कुछ समय और यहाँ पड़ा रहे और घोर तपस्या से इन निशानों को भी मिटाने की चेष्टा करे। यह इलाका बहुत सुन्दर था। एक मनोहर घाटी, चारों ओर ऊँचे ऊँचे पहाड़; पहाड़ों पर चीड़ और देवद्वार के वृक्ष उगे हुए थे। उसकी कुटिया के सामने एक पहाड़ी नाला बहता था। उसका पानी शीतल और स्वच्छ था। बहुधा वह नाले से होकर पहाड़ों पर फैले हुए जंगल में ग़ायब हो जाता था। वह जंगल कितना घना जान पड़ता था! बेले, भीकड़ और तोरियों की झाड़ियाँ फिर सुम्बलू और पीलू की फलदार झाड़ियाँ उनके बाद जैसे. जैसे वह पहाड़ पर चढ़ता जाता, उसे खट्टे अनारों का फैला हुआ जंगल दिखाई देता। इनके बाद चीड़ और फिर देवदार के वृक्षों की पंक्तियाँ शुरू हो जातीं। वायु में कितनी शीतलता और मधुरता होती थी! कई स्थानों पर तो जंगल इतना घना हो जाता कि वृक्ष

अपने हरे पत्तों से सूर्य की किरणों को रोक लेते थे। जंगल से लौटते हुए संध्या समय कई बार उसे लोमड़ियाँ और गीदड़ झाड़ियों में छिपे हुए दिखाई देते थे। इस जंगल में न जाने क्यों उसे उस युवती की याद आ जाती थी, जिसे वह हरदम भुलानें की चेष्टा कर रहा था। जंगल से लौट कर वह समाधि लगाता। कई बार कृष्ण जी का चित्र सामने रख कर वह माला फेरा करता। लेकिन कल्पना-पट पर कोई और चित्र आ जाता। उसका शरीर आग की तरह गर्म हो जाता, उसके कान लाल हो जाते, उसका रक्त-प्रवाह तीव्र हो जाता, उसका हृदय ज़ोर ज़ोर से धड़कने लगता और उसका गला सूख जाता। वह बहुधा ऐसे अवसरों पर नाले पर नहाने के लिये चला जाता। उसके शीतल जल में उसे एक विचित्र शान्ति और सुख मिलता था।

कुछ वर्ष और बीत गये। उसके सिर के बाल और लम्बे हो गये। उसकी साधुता का रंग और चमक गया और अब वह एक पूर्ण साधु समझा जाने लगा। लोग अब उसे बाबा कह कर पुकारते हैं। अब उसमें और ऋषियो और मुनियों में अन्तर ही क्या था? क्या उसने दस वर्ष तक घोर तपस्या न की थी? क्या उसने दस वर्ष तक माला के मनके न फेरे थे? क्या उसने इसी जगह बैठ कर दस वर्ष धूनी नहीं रमाई थी? क्या उसने इन दस वर्षों में लोगों के हृदयों को मोह न लिया था? क्या गत

दस वर्षों से उसके पास इलाक़े भर के लोग, स्त्रियाँ और बच्चे नहीं आते थे? इस दस वर्ष के समय में उसने वह सब कुछ किया, जो एक साधु बनने के लिये ऊसे करना चाहिये था। इस दस वर्ष के समय में उसने जंगलों की धूल छानी थी, ईश्वर की पूजा की थी। ऊसने अपनी जवानी को पैरों के तले रौंदा था; अपनी इच्छाओं का दमन किया था; अपनी आशाओं के घरौंदे को बर्बाद किया था; दिन पाठ करते करते और रातें जाग जाग कर बिताई थीं। लेकिन चित को शान्ति न प्राप्त हुई थी। हृदय में वही बेचैनी थी, दिमाग़ में वही पीड़ा, वही कम्पन! और फिर बसन्त की ऋतु में जब वृक्षों की शाखायें फूट पड़ती थीं, सूखे वृक्ष हरे भरे हो जाया करते थे, लाल सफ़ेद फूल सेब की टहनियों पर मुस्करांने लगते थे और जब गाँव की नवयुवतियाँ अपने बालों में भड़कील फूल टाँक कर उसके चरण छूने के लिये आया करती थीं, तो कई बार उसने अपने ओठों को काट खाया था, कई बार वह रातों को उठ कर स्नान किया करता था। जब खेतों में सरसों फूलती और उसे चारों ओर फूल ही फूल दिखाई पड़ते, जब पर्वतों पर हरियाली ही हरियाली होती, उस समय उसे सुन्दर घाटी में चन्द्र और तारों के अतिरिक्त और कुछ न दिखाई देता। वह अक्सर सरसों के खेतों में पागल होकर लोटने लगता, और सरसों के फूल खाने लगता। वसन्त ऋतु में जब लोग उसे सरसों के खेत में लेटा हुआ

देखते, तो वे समझते कि बाबा ईश्वर के कृपा पात्र हैं। उन्हें भगवान् से कितनी लगन है! वे भगवान् की याद में मस्त हो गये हैं। लेकिन उन्हें क्या पता कि उन्हें वसन्त ने पागल बना दिया था। वह अक्सर सोचता कि परमात्मा ने यह सौन्दर्य क्यों बनाया? ये पीले पीले फूल, ये फलों से लदे हुये वृक्ष, यह चन्द्रमा का शीतल प्रकाश, थे हँसते हुये तारे किसके लिये थे? अगर यह सब कुछ ईश्वर के लिये था, तो मनुष्य के लिये क्या है?

समय बीतता गया। अब वह लोगों से बहुत कम बोलता। अब वह अधिक समय ईश्वर भजन में बिताता। लोग कहते थे–"बाबा जी अब मुक्त हो गये हैं। उन्हें भगवान् के नित्य दर्शन होते हैं। वे रात को भगवान् से बातें करते हैं। हर आदमी के मन की बात जान जाते हैं और हर सङ्कट को टाल सकते हैं।"

अब उसे यहाँ आये हुये चौदह पन्द्रह वर्ष हो गये थे। उसके दर्शन के लिये लोग दूर दूर से आते थे। लोग कहते थे–"बाबा जी के चेहरे पर ज्योति है, तेज है, उनका माथा चमकता है।"

रात को चन्द्रमा के स्वच्छ प्रकाश में वह अपने जीवन-ग्रन्थ के पन्ने उलटता, तो वह अक्सर सोचता कि उसने इन पन्द्रह वर्षों में क्या कुछ किया है; क्या कुछ प्राप्त किया है? और जब वह विचार करता, तो उसे ज्ञात होता कि इस अरसे में उसने अपने आपको मारा,

अपनी बुद्धि को मारा, अपने पेट को भूखा रखा, लेकिन इन पन्द्रह वर्षों में सिवाय एक युवती को भूल जाने की चेष्टा के वह और कुछ न कर सका था। भक्ति और तपस्या ने उसे हृदय की शान्ति प्रदान न की थी। पेट की भूख भी पूर्ववत् तंग करती थी, दिमाग़ की परेशानी उसी तरह थी। लोग उसका आदर करते थे, लेकिन इस सम्मान को प्राप्त करने के लिये उसने अपनी इच्छाओं के टुकड़े टुकड़े कर दिये थे। उसने सोचा इस महान आकाश के नीचे केवल उसी का हृदय क्यों किसी आज्ञात वस्तु के लिये व्याकुल रहता है? और फिर भी लोग उसे देवता समझते हैं! अज्ञानी! मूर्ख!

....

और फिर वसन्त आया। वसन्त से उसे सदा डर लगता था। वसन्त उसके दबे हुए उद्‌गारों को सचेत कर देता था, उसकी सोई हुई उमंगों को जगा देता था। उन उमंगों को जी जान से मारने के लिये उसने क्या नहीं किया, लेकिन ये उमंगें क्यों नहीं मरतीं? क्या ये उमंगें भी उसके जीवन का अंग थीं? इस बार जो बहार आई, तो अपने साथ रजनी को लाई।

रजनी अपनी सास के साथ आया करती थी, और अक्सर कई घण्टे सास और बहू दोनों उसके सामने बैठा करतीं। कई बार रंजनी की सास अपनी बहू को वहीं छोड़ कर किसी बहाने से इधर उधर हो जाया करती। इसी तरह कई बार हुआ। वह सोचता कि क्या ही अच्छा हो,

यदि ऐसा न हुआ करे। भला यह क्या चाहती हैं? यह क्यों नित्य आती है? एक दिन उसनें बुढ़िया से पूछ लिया "माँ जी आपको क्या कष्ट है?" वृद्धा ने जवाब दिया—"बाबा, मेरी रजनी के संतान नहीं होती।" उसने यह सुन कर राख की एक चुटकी देकर सास से कहा—"माँ जाओ, भगवान् ने चाहा, तो सन्तान हो जायगी।"

लेकिन वे फिर आ जातीं, और दोनों कई कई घण्टे उसके पास बैठा करतीं।

और रजनी को नित्य आते देख कर और अपने सामने बैठा देख कर उसके मन की दशा वही होनें लगी, जिसकी उसे आशा थी। रजनी की कमल की सी आँखें, उसके गालों का शहतूत का सा रंग और गोल चेहरा! वर्षों की तपस्या से उसने जिस हृदय को राख समझा था, उसमें फिर से दबी हुई चिनगारी सुलगनें लगी थी—विशेष कर उस दिन, जब रजनी ने चलते चलते अपनी रेशमी साड़ी ऊँची करके उसे अपनी सफ़ेद पिंडली दिखा दी थी। वह देर तक उस सफ़ेदी और उस सुन्दर चर्म के विषय में सोचता रहा था।

वह रात भर सो न सका था। दूसरे दिन उसने निश्चय कर लिया कि वह रजनी को वहाँ आने से मना कर देगा। उसने रजनी से पूछा—"रजनी, तुम क्या चाहती हो?"

"बाबा, मेरी गोद सन्तान से ख़ाली है।"

"लेकिन तुम्हारा पति तो है न?"

रजनी ने सिर झुका लिया, और परेशान दृष्टि स देखने लगी।

"रजनी, तुम यहाँ न आया करो।" यह बात कहते समय उसका हृदय ज़ोर ज़ोर से धड़कने लगा। यह बात कह कर वह बाग़ में चला गया।

यहाँ चारों ओर सन्नाटा था। शफ़तालू के वृक्ष सफ़ेद सफ़ेद फूलों से सुसज्जित थे। ऐसा प्रतीत होता था, मानो वृक्ष की हर एक टहनी अपने लिये आकाश से तारे तोड़ लाई है। सूरजमुखी के फूल लजाई हुई दुल्हन की तरह एक ओर को झुके हुये थे। वह किससे अपने कष्ट का हाल कहता? किस पर अपनी असल वेदना प्रकट करता, जिससे उसकी आत्मा का कण कण तड़प रहा था? उसने निश्चय किया कि उसे अब यहाँ नहीं रहना होगा। एक बार फिर उसे इधर उधर मारे मारे फिरना होगा। नहीं तो....। फिर वह सोचने लगा—क्या रजनी कल आयेंगी? उसनें तो रजनी को आने से रोक दिया था।

दूसरे दिन प्रातः समय रजनी न आई, और उसे एक झटका सा लगा। ऐसा झटका, जैसा किसी प्रिय वस्तु के खो जाने से लगता हो। वह देर तक गम्भीर और चिंतित रहा। वह क्या करे? अन्त में वह समाधि लगा कर बैठ गया। परन्तु समाधि में भी वह व्याकुल ही रहा। फिर किसी के पैरों की आहट ने उसे चौंका दिया। रजनी

फिर आ गई थी। रजनी ने उसके चरण अपने कोमल हाथों में ले लिये और अपनी आँखें–आँसुओं से तर आँखें–उसके पाँव से लगा दीं।

"रजनी! तुम यहाँ क्यों आई हो? यहाँ से चली जाओ। चली जाओ, अभागिनी नारी!"

उसने बड़ी मुश्किल से इतना कहा। मुँह से 'नहीं' निकल रहा था, लेकिन शरीर का रोम रोम 'हाँ' कहने का आग्रह कर रहा था। उसका दिमाग़ चकराने लगा, हाथों से माला छूट गई, शरीर एक जलती हुई भट्टी की तरह गर्म हो गया। तपस्या के बाँध टूट गये, और जवानी का राग उसके कानों में गूँजने लगा।

....

बैठे बैठे उसे रजनी ने जगा दिया। "हम कहाँ आ गये हैं।"

"फिर उसी जगह, जहाँ से भाग कर गया था।" उसके मुँह से सहसा निकला।

यही प्लैटफ़ार्म था, यही रेल की पटरी, यात्री उसी प्रकार इधर उधर भाग रहे थे। कुली उसी तरह "कुली, साहब, कुली चाहिये, कुली" पुकार रहे थे। और फिर वह रजनी की आँखों की ओर देखने लगा। उसने अनुभव किया कि जितनी शांति उसे इन आँखों को देखने से मिलती है, उतनी उसे सोलह वर्ष की तपस्या से भी नहीं मिली।

लाल उँगलियाँ

क्या करते हो राजेन्द्र भइया? कुछ नहीं, बी० ए० पास कर चुका हूँ। अब क्या कर रहे हो? एम० ए० की तैयारी कर रहा हूँ। हूँ! फिर क्या करोगे? बी० ए० की परीक्षा फिर दूँगा। आहा आहा हा हा हा।

साली नौकरी नहीं मिलती, बहुत कोशिश कर चुका हूँ। झूठ बकते हो, दिन रात घर में रहते हो; और अपने माँ बाप का धन व्यय कर रहे हो, और फिर कहते हो बहुत कोशिश कर चुका हूँ, तुम क्या कोशिश करोगे, तुममें काम करने की बुद्धि ही नहीं, तुम काम कर ही नहीं सकते, जो काम करना चाहते हैं वह काम ले आते हैं, तुम काठ के उल्लू हो, तुम क्या करोगे, बूट पालिश करो, बूट! सुना तुमने! क्या कभी किसी से मिलने गये, किसी की सिफ़ारिश पाने के लिये हाथ पाँव मारे—

किसी की जूतियां चटखाईं, किसी के लड़के को मुफ्त पढ़ाया किसी की चापलूसी की, किसी की प्रशंसा में कवितायें पढ़ीं, और फिर कहते हो बहुत कोशिश कर चुका हूँ, मूर्ख, आलसी। क्या नौकरी इस प्रकार मिला करती है, आज कल के लड़के काम तो करते नहीं, वह तो चाहते हैं कि बैठे बिठाये काम मिल जाय, हज़ारों रुपयों की थैली हाथमें आजाये, और फिर वह गुल छर्रे उड़ायें, नाकसे धुआँ निकालें सिनेमा देखें, और निस्बत रोड पर लड़कियों से दिल्लगी करें।

बदमाश, गुण्डे कहीं के!

मेरी ओर नहीं देखते सूखकर काँटा होगया हूँ, अँग हड्डियों का ढाँचा बन गया है, यह किस प्रकार हुआ? क्यों कर हुआ, तुम्हारी तरह ही था, मोटा–ताजा–आँखों में चमक थी, शरीर माँस से भरा हुआ था, चेहरे में मन मोहकता थी--कि मर गई--क्या किया-------जोंक पी गई--कहा न था, परिश्रम करो, खूब मन लगाकर पढ़ो, एम० ए० में सेकन्ड डिवीज़न लो, तुम क्या जानो नौकरी किस प्रकार मिलती है, जाओ, डँड पेलो, अखाड़े में जाओ, मालिश करो, आये पढ़ने, और फिर कहते हो नौकरी नहीं मिलती।

काम करने से नौकरी मिलती है, मियाँ! परवेज़ घोष की तरह आँखें अन्दर स धँचुकी हैं, छाती दुखती हैं फेफड़ों से खून आता हैं, गवर्नमेन्ट ने इन्हें पी० एच० डी० की डिगरी दी है और एक हज़ार रुपये प्रति मास वेतन

देगी, सोलन जा रहे हैं, ऐसे नौकरी मिलती है, तुम्हें क्षय चाहिये या नौकरी, आहा– हा, ओह-- हो, तपेदिक़, जाओ सोलन वार्ड में रहो और लोगों से पूछो कि उन्हें क्यों क्षय हो गई, विटामिन खाने को नहीं मिलता, दूध पीने को नहीं मिलता, और स्वच्छ हवा श्वाँस लेने को नहीं मिलती, नौकर होकर क्या करोगे, शादी करोगे क्या तुम्हें सँसार में और काम नहीं, नौकरी के बाद शादी, स्त्री----------स्त्रियाँ तो बाज़ार में फिरती हैं किसी एक को पकड़ लो, अरे जूतियों से डरते हो, जूतियों से या स्त्री से, मेरे भगवान्! परतन्त्र भी कोई न हो, स्त्री से डरते हो, ग़ुलाम कहीं के, आज़ादी नहीं मिलती, मिले क्यों कर, अच्छा आओ, एक और रास्ता दिखाऊँ, जाओ, उस बाजार में जहाँ स्त्रियाँ बिकती हैं, समझगये, मैं भी कई बार गया हूँ, जब तक शादी नहीं की थी प्रति दिन जाता था, अरे, क्या कहा सूज़ाक------सूजाक से डरते हो, देहली का औषधालय मौजूद है, कवि श्यामदास मौजूद हैं, पागल, स्वयँ मेरे पास एक अच्छा नुस्ख़ा है "एक दिन में पीप जलन बन्द" एक बार मुझे भी हुआ था, सुना तुमने, सूज़ाक नहीं आतशक, कुछ भी नहीं होता ----ख़ून खराब हो जाता है, अँग पर फोड़े निकल आते हैं, और फिर–फिर उपचार न कराओ तो मुक्ति मिल जाती है, कितना सरल उपाय है, मुक्ति पानें का, स्त्री के द्वारा मुक्ति।

क्या कहा कोढ़ हो जायेगा, कोढ़ से डरते हो, अरे मियाँ तुम बड़े डरपोक हो, प्रतिदिन क्षमा माँगने वालों को रास्ते में लेटे हुये देखते हो और फिर भी उन से डरते हो, मैं समझ गया तुम स्त्री से डरते हो, तुम निर्वाण पाना नहीं चाहते, मैं……मैं……छः बच्चों का बाप हूँ दो बच्चों को मैंने उपदंश दिया है, एक की आँखें अन्धी हो गई हैं, और दूसरे की टाँगें टेढ़ी हो गई हैं, और मेरी बीवी को भी उपदंश हो गया है, लायलपुर ले गया था, लेडी डाक्टर कहने लगी—

"तुम अच्छी लड़की हो, टुमारा कोई कसूर नहीं, सारा तुम्हारे मरद का कसूर है, वह बदमास है, तुम मत रो, अच्छा हो जायेगा"।

भगवान सत्यानाश करे उस लेडी डाक्टर का, अरे मेरी पत्नी को अच्छा कर दिया, क्यों—मुझे अपनी स्त्री से नफ़रत है, कितनी कुरूप है, मैं एक कलाकार हूँ मुझे सुन्दरता भाती है, सुन्दर स्त्रियाँ, गोल गोल मक्खन की तरह सुफ़ेद बाज़ू, मन मोहक निखरी हुई रँगत, आँखें जैसे— क्या कहा? कोयले की तरह—क्या कहा? मर गई— नहीं, नहीं, मेरी स्त्री जीवित है, और मैं भी जीवित हूँ, परन्तु फिर भी उस बाज़ार में जाता हूँ, जहाँ स्त्रियाँ बिकती हैं, अनाजों की तरह, तुम तो कहते थे जाना बन्द कर दिया, झूठ बकता था, मुझे सुन्दरता चाहिये, सुन्दर स्त्रियों के बिना मैं जीवित नहीं रह सकता।

क्या कहा— निकट के गली कूचों में? अरे भई इन्हें भलेमानस फाँस सकते हैं, मैं रात्रि के अन्धेरे में जाता हूँ, कौन कहता है, मैं दिन को जाता हूँ, लोग रात को जाते हैं, मैं एक अच्छे पद पर हूँ। क्या कहा— रात को जाऊँ, हाँ समझ गया, तुम्हारी चालाकी, दफ़्तर से निकलवाना चाहते हो, और मेरा स्थान पाना चाहते हो, कभी नहीं, मैं दिन को जाऊँगा, रात को बदमाश जाते हैं, मैं शरीफ़ हूँ, मैंनें शादी की हुई है, मेरे बाल बच्चे हैं, मैं दिन को जाता हूँ.....।

ओह! तुमने मिस शमी नहीं देखी, ईश्वर क़ी क़सम निरी मूर्ति है, सोने क़ी मूर्ति, तुम क्या जानो उसमें कितनी मन मोहकता है, उसकी गोल गोल बाहों में कितनी सुन्दरता है, उन सुफेद सुफेद पतले पतले हाथों में कितनी रुकावट है, और फिर मिस जिल्लो——उफ्—उसकी आँखें तीर की तरह कलेजे में घुस जाती हैं, और हाँ, याद आया मिस बानू भगवान उसकी आयु तिगुनी करे, अरे देखोतो लोट पोट हो जाओ, उसे मुझ से कितना प्रेंम है, बेहद प्रेम। एक दिन उसके कोठे पर एक सप्ताह के बाद गया—कहने लगी मैं तुझ से प्रेंम करती हूँ, हरामज़ादे। तू दूसरी रंडियों के पास जाता है, बताओ, मुझ में क्या कमी है, क्या तू मुझे हैवान समझता है, क्या मैं प्रेम नहीं कर सकती हरामी गधे मैं कितने दिनों से तेरी जुदाई में घुल रही हूँ, आज चढ़ा है हाथ——मैं तुम्हें खूब पीटूँगी--

क्यों जाते हो किसी के घर, बोलो, कहो, नहीं नहीं, क्षमा कर दो, अब कभी न जाऊँगा, अब कहीं न जाऊँगा अब क्षमा कर दो। परन्तु उसने मेरा बूट छुपा लिया और कहने लगी– "जाओ मरदूद, बेशर्म, दूसरी वेश्याओं के पास जाता है"। मैंने उसके पाँव पकड़ लिये, भगवान के लिये क्यों दफ़्तर से निकलवाती हो, कहाँ जाऊँ। नँगे पैर, नँगे सर, *किसी ने देख लिया तो,*......*तो कह देना, पागल हो गया* हूँ, हैरान हूँ, क्या कहा मैं पागल हूँ? पागल हूँ, मैं बिल्कुल पागल नहीं, हिजड़ा हूँ, हिजड़ा! नहीं...नहीं... नहीं, मेरे छः बच्चे हैं, मुझे कौन हिजड़ा कहता है.....मैं, छः बच्चों का बाप हूँ।

ओह! मैं भूल गया तुम भी चलोगे! अरे भाई! एक और पुरानी जानकार आई है, बिल्कुल नई, रावलपिंडी से आई है, देखो तो तड़प उठो, कानों में चमकते हुये लटकन, बाहों में हरे रँग की चूड़ियाँ और अँग पर सरसराती हुई आकाशी रँग की साड़ी; क्या अच्छा हो तुम उसे देख सको, ओह! तुम बाज़ार जाने से डरते हो; स्त्रियों से, पुरुषों से, बड़े आदमियों से, बच्चों से, और अपने आप से भी। चलो मेरे साथ। उसने एक मुहल्ले में जगह ली है। मैं प्रतिदिन वहीं जाता हूँ, कोई पूछता है तो कहता हूँ; मेरे सगे का घर है। मेरे मामू की लड़की रहती है, मेरी साली रहती है, हँस रहे हो, क्या कहा रुपया नहीं, पागल चोरी करो, डाका डालो, पुलिस से

डरते हो, अरे अरे, हर मनुष्य से डरते हो, तुमतो डर से भी डर खाते हो, क्या कहा, बीमारी--बीमारी से डरते हो, डाक्टरों से डरते हो, उठो, चलो भी, कितनी देर से तुम्हारे यहाँ बैठा हुआ हूँ, कुछ तो ख्याल करो, दुनिया देख लो, मियाँ, अरे अरे यह क्या, रो रहे हो; बीमारी --बीमारी; इतना भी क्या डर; देखो मैं भी हूँ; बिल्कुल स्वस्थ हूँ; बिल्कुल तन्दुरुस्त हूँ; क्या हुआ; कि शरीर पर माँस नहीं; क्या हुआ; कि एक क़लम की तरह दुबला पतला हूँ; देखो; स्वास बराबर आ जा रहा है; प्रति दिन रोटी खाता हूँ; और तुम क्या करते हो मक्खियाँ मारते हो, होश की दवा करो, राजेन्द्र भाई।

घिर घिर--म्याऊँ म्याऊँ, कौन बोल रहा है, अख़्तर भाई! बिल्लियाँ, बिल्लियाँ.....अरे चूहे कहाँ हैं, अरे चूहे कहां हैं, ओह, तुम यह भी नहीं देखते, तुम्हारे सामने, तुम्हारे आगे, तुम्हारे दायें बाये; ऊपर नीचे, प्रतिदिन देखते हो, गलियों में बाजारों में अरे तीन सौ पचास लाख चूहे हैं.....आहा.....आहा.....आहा.....

तीन सौ पचास लाख चूहे, अरे, बिल्लियाँ किधर गईं, वह देखो सामने, मैं आँखें बन्द कर लेता हूँ, कहाँ हैं, दिखाई नहीं देती, अरे बिल्लियाँ कहां हैं दिखाई नहीं देतीं, खा जायेंगी, खाने दो, मैं आंखें बन्द किये देता हूँ,

मुझे कोई नहीं खा सकता, तीन सौ पचास लाख चूहे आहा, आहा, .।

क्या कहा, क्या कहा, अख़्तर भाई, हां, तुम ठीक कहते हो, मैं लेखक हूँ।

लोगों को देख कर मुझे रोना आता हैं तुम्हारी सूरत देख कर भी, अरे तु हें क्या होगया, आज कुछ नहीं खाया कुछ तो खालो, पानी पी लो, अख़्तर भाई, ठँढा पानी, हिन्दू पानी, मुस्लिम पानी, कौन सा पानी पियोगे, पानी पीलो, अख़्तर सन--स्ट्रोक नहीं होगा, लू नहीं लगती।

हां। मैं लेखक हूँ, कहानियां लिखता हूँ, दोहे कहता हूँ, अरें देखते नहीं मज़दूरों की हालत, कितने ख़राब और ठिठुरे हुये नज़र आते हैं मुख पर रंगत नहीं होंठ मुस्कुराने से शर्माते हैं और क्या, कहा जीवन फीका और बेमज़ा है हर समय का रोना।

कहानियां लिखता हूँ, मैं प्रगतिशील लेखक हूँ, मज़दूरों पर दोहे कहता हूँ, लोग सुनते हैं तो सर धुनते हैं, वाह भाई वाह ख़ूब, लिखा, मज़दूरों का कलेजा निकाल दिया।

अब भेजा बाहर निकालो, क्या कहा, क्या मिलता है; अरे मज़दूरों को क्या मिलता है, कि उन पर लिखने वाले भी, प्रगतिशील ... अरे नाम होता है, जनता में प्रसिद्ध हो गया हूँ, यह कौन जारहा है, प्रगतिशील लेखक अरे इस की हालत, चेहरे की रंगत पीली .... गाल भीतर को पिचके हुये, गर्दन सूखी हुई, चाल ढाल में मुर्दनी, आँखों में भयानकता, अन्धा क्या जाने बसंत की बहार.... मैं मज़दूर बनना चाहता हूँ, मैं एक नये साहित्य को पैदा करना चाहता हूँ, जब तक मैं मज़दूर न बन जाऊँ, जब तक मैं उनकी तरह जीवन व्यतीत न करूँ उनकी भावनाओं, उनकी उमंगों, उनके जीवन को कैसे बदल सकता हूँ. मैं मज़दूर बन रहा हूँ, प्रतिदिन...दिन बदिन... क्या कहा, तपेदिक़ हो जायेगा, होने दो, मुझे परवाह नहीं मेरा नाम चमक जायेगा, मज़दूरों में परिवर्तन, उनका नेता, आज मज़दूर इकट्ठे होंगे, कहाँ?.... मोची दर्वाज़े के बाहर, संसार के मज़दूर इकट्ठे होंगे, संसार के मज़दूर इकट्ठे हो जाओ, तुम्हारे लिये कुछ नहीं बनेगा, केवल बेड़ियाँ बनेंगी, क्या कहा, दुनिया के मज़दूर इकट्ठे होंगे, मोची दर्वाज़े के बाहर...अरे कौन भौंक रहा है? कुत्ता... नहीं...नहीं उल्लू...अरे उल्लू तो रात को बोलते हैं, यह कलियुग है, आज कल दिन को उल्लू बोलते हैं।

हां ठीक है, कलियुग है मुझे अपनी स्त्री पसंद है, और तुम्हें अख़्तर भाई, ओह! तुमने तो शादी भी नहीं

की, क्या कहा, मेरी स्त्री बंदसूरत है, तो क्या हुआ, मुझे उसकी उँगलियाँ पसन्द हैं, तुमने उसकी उँगलियाँ नहीं देखीं, वह प्रतिदिन पालिश करती है, बूट पालिश नहीं, नाखूनों की पालिश, अरे प्रतिदिन लाल उँगलियाँ, सुन्दर दिल को लुभाने वाली, और पालिश के पश्चात् ऐसी ज्ञात होती हैं जैसे सोने की फांकें, अरे सोने की फांकें तो ठँढी होती हैं, इन में खून खौलता है, नर्म और गर्म हाथ, चिरवां उँगलियां चुग़ताई का सौंदर्य, क्या कहा, काम कौन करता है, मेरी स्त्री, तोबा तोबा, मेरी स्त्री क्यों काम करे, अरे नौकर, इतनी शक्ति नहीं, कि नौकर रख सकूँ, ठीक कहा, तुम बहुत चतुर हो, काले कौवे की तरह; मेरे हृदय की बात जान लेते हो, उस की एक सास है, वह काम करती है, दिन और रात; मियाँ तुम्हारी क्या लगी, क्या कहा; मेरी क्या लगी, मेरी स्त्री की सास, मेरी क्या लगी, ठहरो, सोचकर बताता हूँ, हाँ, याद आया, मेरी कुछ भी नहीं, अरे मेरी स्त्री की सास मेरी क्या लगी; दिनरात वह काम करती है, बहुत अच्छा काम करती है। दिनरात बर्तन साफ़ करती है, फ़र्श धोती है, झाड़ू देती है, रोटी पकाती है, घर का सारा काम बहू की सास के सिर है। एक दिन बुढ़िया कहने लगी, तुम्हारी स्त्री काम नहीं करती, मैंने हँस कर टाल दिया, खूब कहा, ऐसा ही करना चाहिये, कहती है, मेरी स्त्री काम नहीं करती, बर्तन साफ़ नहीं करती,

खूसट बुढ़िया नहीं जानती कि अगर लाल उँगलियाँ बर्तन साफ़ करते करते ख़राब हो जायें, तो बताओ, बताओ, मेरी स्त्री की लाल उँगलियाँ बुरी दिखाई देने लगें, तो उसका ज़िम्मेदार कौन होगा, मैं किस के सहारे जीवित रह सकता हूँ, क्या कहा, सारा काम बुढ़िया से लेता हूँ, क्या वह मनुष्य नहीं, अरे मनुष्य वह बुढ़िया, ६० साल की बुढ़िया, चलने फिरने से विवश हाथ काँपते हुये, कहती हैं, मुँह से पीप आती है, दाँत हिलते हैं, मसूढ़े ख़राब हो चुके हैं, डाक्टर को बुला लाओ, दाँत निकलवादो, अरे मियाँ, जहाँ जहाँ ख़ून होता है, वहाँ से पीप भी आसकती है, और साठ साल की आयु में पीप न आये तो और क्या आये, शहद निकलेगा क्या ? कहती है मरूँगी नहीं, तुम्हारा काम करूँगी, बर्तन साफ़ करूँगी, सौ साल तक ज़िन्दा रहूँगी। मरने में नहीं आती, इतना काम दिया हुआ है, फिर भी मरने में नहीं आती कितना कठोर जीव है, मुझे अपनी पत्नी की उँगलियाँ पसन्द हैं, बहुत ही सुन्दर और भली, रेशम के तारों से अधिक कोमल, भला वह क्यों बर्तन साफ़ करे, उँगलियाँ कुरूप हो जायें तो मैं क्या करूँगा, अख्तर भाई! तुम मुझे कोसते हो, बताओ; मैं किसके सहारे जी सकता हूँ, यही तो मेरी ज़िन्दगी का धन है, अगर यह मिट जाये तो फिर — मैं लेखक हूँ; अत्यधिक भावुक हूँ; बुढ़िया काम करे और खूब करे—और वह लाल उँगलियाँ·····क्या कहा, अरे

बोलो भी, मेरे कान तो बहरे नहीं, हाँ मास्तिष्क में भूसा भरा हुआ है, कहीं कान तो बहरे नहीं, अख्तर मियाँ, तुम क्या जानो, शादी के आनन्द। मैं उन लाल उँगलियों को ख़राब नहीं होने दूँगा।

कहती है, मेरा ख्याल करो, क्या कहा, कौन? अरे वहीं, मेरी स्त्री की सास; कहती है, मैंने तुम्हें जाया पाला, पोसा, पढ़ाया, मुझ पर एहसान जताती है, शर्म नहीं आती अख़्तर मियाँ, मैंने कभी एहसान जताया मैं जिस पर एहसान करता हूँ...... जो एहसान करके जताने लगे, तुम्हें दो साल से पढ़ा रहा हूँ, तुम ही बताओ, कभी तुम्हें कुछ कहा, कहो, बोलो। कहते क्यों नहीं, चुप क्यों होगये, जीभ क्यों रुक गई, बोलते क्यों नहीं।
अरे कौन भौंक रहा है, बाज़ारी कुत्ते, गोली से उड़ा दो, यह कुत्ते आदमियों को काटते हैं, कुत्तों को कसौली भेज दो, क्या कहा— ऊँचे स्वर में कहो, मैं हूँ, और तो कोई नहीं, मेरे बाप के विषय में पूछते हो, उसकी दृष्टि निर्बल हो गई है, वह ऐनक माँगता है, कितनी आयु है उसकी, पौंसठ साल, पौंसठ साल का बूढ़ा ऐनक माँगता है, काया कल्प चाहता है, बूढ़े नवयुवकों से दो क़दम बढ़ गये, फिर कहो, आवाज़ नहीं आती, बाज़ की आँखें लादूँ, ———, खूब कहा, अख़्तर, मेरी पत्नी को देखना चाहता है।

ऐनक चाहता है, आँखों में प्रकाश चाहता है, ऐनक पर पन्द्रह रुपये लगते हैं क़ब्र में

पैर लटके हुये हैं, फिर भी आँखों में बीनाई चाहता है, कहाँ से लादूँ, हाँ काया कल्प, पंडित मालवीय -------रुपये कहाँ हैं, पन्द्रह रुपये नहीं मिलते, हाँ ठीक कहते हो, पन्द्रह रुपयों से पन्द्रह फ़िल्में देख सकता हूँ, पन्द्रह स्त्रियाँ, सुन्दर रसीले होंठ, नशीली आँखें, उभरा हुआ सीना, बूढ़ा खूसट माँगता है, पैंसठ साल के बाद, आहा---आहा---आहा। फट - फट - फट, धम – धम – धम, कौन आया, बम गिरा, कहाँ? लन्दन में, लेकिन आवाज़ यहाँ आरही है, कानों में उँगलियाँ डाल लो, हिनाई उँगलियाँ सोने की फांकें।

आज़ादी, लार्ड एमरी का बयान, इन्डिया फर्स्ट, क्या कहा, खूब कहा, कौन भाषण दे रहा है, चर्चिल, हम आज़ादी के लिये लड़ रहे हैं, हम ग़ुलामी को इस दुनिया से मिटा देना चाहते हैं, हम फ्रांस को दोबारह ज़िन्दा करना चाहते हैं, हम लड़ेंगे हर जगह, पृथ्वी पर सूखे पर, समुद्र पर, आसमान पर, अपनी ज़मीन पर, कैनाडा में आस्ट्रेलिया में, हम सबको स्वतंत्र करना चाहते हैं, नहीं....नहीं....मैं भूल गया, हम यूरोप को हिटलर के पँजे से छुड़ाना चाहते ह, क्या यूरोप में हिन्दोस्तान भी शामिल है......।

खूब ज़ोर से तालियाँ पीटो, आँख़्तर मिय, स्वतंत्रता माँगते हो---स्वतंत्रता माँगने से नहीं मिलती, और कुछ माँगो, क्या कहा, – मौत – अभी लो ... इसी समय लो... चिल्लाओ .... खूब ज़ोर से चिल्लाओ, हाँ कहो, मस्जिद

मन्दिर बन गई, मस्जिद मन्दिर बन गई, वह देखो सामने, बाजार बन्द होने लगे, बनिये घरों में घुस गये, लाठियाँ चलने लगीं, पत्थर बरसनें लगें, हाय मेरा लाल, किसी हिन्दू नें गोली से मार दिया, हाय मेरा बच्चा ··· किसी मुसलमान ने छूरा भोंक दिया ··· देखा ··· देखते नहीं, खून की नदियाँ, कहाँ ··· वह देखो ··· मन्दिर मस्जिद बन गया ··· इन्डिया फर्स्ट, मतचिल्लाओ ... स्वतंत्रता··· हिटलर के बाद, और मौत अभी लो, ··· इसी समय··· जब जी चाहे।

रोज़ी

मेरे पास रोज़ी और जोज़फ़ दोनों आते थे। रोज़ी की उम्र होगी चालीस वर्ष-- और जोज़फ तो बूढ़ा हो गया था। चेहरे पर झुर्रियों का एक जाल सा था, और सर के बाल सुफेद होगये थे। वह फ़ौज में काम कर चुका था। इस लिये बात चीत में अभी तक अकड़फूँ थी। वह बहुधा सूट पहिन कर आता, और ख़ूबसूरत नेकटाई पहिनने का उसे बहुत शौक़ था। ज़िन्दगी में उसने अच्छे दिन देखे थे, इस लिये उसमें ओछापन और कमीनगी बहुत कम थी। अगर कभी कभार उसकी जेब में रुपये होते, तो वह दोनों को रुपये देने से कभी इन्कार न करता और रोज़ी तो अधेड़ उम्र की औरत दिखाई देती थी। जवानी तो वाक़ई ख़त्म हो चुकी थी, लेकिन रोज़ी की बुद्धि में इस बात का ज़रूर अनुभव था, अगर वह एक स्कर्ट पहिन कर बाज़ार में से गुज़ारेगी, तो लोग ज़रूर उसकी तरफ शौक़ की निगाहों से देखेंगे। हर औरत को ख़ूबसूरत बनने का शौक़ रहता है, इस लिये जब कभी रोज़ी अच्छी सी साड़ी पहिन कर आती, या ख़ूबसूरत स्कर्ट पहिनती तो वाक़ई उसका बुढ़ापा कम हो जाता,

और इस बात का संदेह होने लगता कि वह बूढ़ी नहीं है। अभी तक उस में बनने और सँवरने की इच्छा थी। कभी कभी वह बैठे बिठाये अपनी पिंडलियों को वस्त्रहीन कर लेती, और सिगरेट का कश लगा कर जोजफ से बहस करने लगती। एक बात तो स्पष्ट थी कि रोजी बदसूरत थी, माथा घुटा हुआ आँखें अन्दर धँसी हुई, और होंठ मोटे मोटे। बाक़ी जिस्म में कुछ आकर्षण ज़रूर था, जिसको रोजी बरक़रार रखने के लिये प्रयत्न और परिश्रम कर रही थी।

दोनों की आपस में खूब बनती थी, दोनों हमेशा इकट्ठे आते, इकट्ठे सिनेमा जाते, इकट्ठे खाना खाते, और इकट्ठे एक ही होटल में रहते। जोजफ जरा सख़्त तबियत का इन्सान था। मिलिट्री की अकड़फूँ उसी तरह क़ायम थी, इसी लिये वह रोजी पर काफी दबदबा जमाता था। जब दोनों कभी बहस करते करते ज्यादा उलझ जाते, तो जोजफ उसे एक कैप्टन की तरह ख़ामोश रहने का आर्डर देता था। और साथ इंगलिश में एक दो गालियाँ सुना देता। रोजी गालियाँ सुनकर बहुधा चुप हो जाती। दोनों का आपस में क्या रिश्ता था, यह मेरे लिये समस्या ही रहा। क्या दोनों भाई बहन थे, या बीवी ख़ाविन्द, या केवल दो दोस्त, उसकी स्पष्टता दोनों ने कभी न की। इन मुलाक़ातों के दौरान में जोज़फ़ ने रोजी को कभी माई डार्लिङ्ग न कहा, और नहीं बीवी का शब्द उस के

मुँह से निकला, और नहीं जोज़फ ने प्यार भरे अन्दाज़ से रोजी की तरफ देखा। दर असल जोज़फ के व्यवहार में एक तरह की सख़्ती और दबाव टपकता थीं। जोज़फ़ नें मेरी मौजूदगी में कभी रोजी के गालों को न छुआ, और नहीं उसकी कमर में हाथ डाले, और नहीं कभी आशिक़ माशूक़ की सी बातें कीं, दोनों आते, इधर उधर की बातें करते।

इन दिनों दोनों बेकार थे, एक अरसा हुआ कि दोनों एक ही फ़र्म में नौकर थे। फर्म फेल होगई, और दोनों पर इस तरह बेकारी की मोहर लग गई। जोज़फ़ कभी कभी जोश में आकर फर्म वालों को गालियाँ देता। कभी उठकर, कभी बैठ कर, कभी हाथ बढ़ाकर, कभी कमरे का चक्कर लगा मसीह को दुर्वचन कहता। रोंजी अक्सर यह बातें सुनती, और जब जोजफ आपे से बाहर हो जाता, तो वह उसे ख़ामोश रहने की शिक्षा देती। और साथ साथ यह भी कहती "जोजफ मसीह को गालियाँ मत दो, उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, और तुम्हें किस बात की फिक्र है जब तक मैं जिन्दा हूँ, तुम भूखे नहीं मर सकते, मैं नौकरी करूँगी, मैं लोगों के कपड़े सिउगी, मैं फर्श साफ करूँगी, लेकिन तुम्हें भूखा न मरने दूंगी।

"रोजी क्या तुम नहीं जानती मेरे पास आज सिगरेट का एक पैकेट भी नहीं। सुबह से कुछ नहीं खाया, दिन भर मारा मारा फिरता रहा हूँ। कभी इस

जगह; कभी उस जगह, लेकिन कम्बख़्त नौकरी नहीं मिली"।

"मिल जायेगी"।

"कब मिलेगी?"

"ख़ुदा देगा"।

मैं ऐसे ख़ुदा को नहीं मानता, और जिन्दगी भर किसी को धोखा नहीं दिया। अत्यन्त ही ईमानदारी से काम करता रहा हूँ, लेकिन फिर भी बेकार हूँ। और ख़ासकर इस बुढ़ापे में।

और इस तरह जोज़ाफ और रोज़ी दोनों आपस में लड़ते झगड़ते। जोजफ रोजी को गालियाँ देता, और वह चुपके से सुनती। और कभी मेरे सामने ही वह जोज़ाफ की जेब में एक दो रुपये डालदेती। सिगरेट का पैकेट उस के हवाले करती, और इस तरह उसकी देख भाल करती।

और इसी लड़ाई झगड़ें में कोई दिन गुजरते गये, रोज़ी कपड़े सी कर जोज़ाफ़ की मदद करती। अगर कहीं से उसे कुछ रुपये मिल जाते तो वह जोज़ाफ़ को ज़रूर रुपये देती उसका ज़रूर ख़्याल रखती। एक रोज़ रोज़ी फिर मेरे कमरे में आई।

"तुमने जोज़ाफ़ का नया कोट देखा।"

"नहीं तो।"

"वह मैंने सीकर दिया है।"

"बहुत अच्छी बात है।"

"मैं अपनी बहन से पचास रुपये माँग कर लाई थी, उसमें से मैंने उसके दो बुशशर्ट ले लिये।"

"बहुत अच्छी बात है।"

"अब वह नौकर हो गया है।"

"बहुत खूब।"

"लेकिन वह मेरी परवाह नहीं करता।"

"क्या मतलब?"

"मेरा मतलब यह है कि जब उसे तन्खवाह मिलेगी, तो उसमें से वह एक पाई भी मुझे न देगा।"

"वह क्यों? और अगर वह नही भी देगा, तो क्या बात है, आखिर तुम दोनों एक ही हो।"

"क्या कहा तुमने!" वह चौंक कर बोली।

"मेरा मतलब यह है कि तुम दोनों दोस्त हो।" मैं पैंतरा बदल गया। वह मेरी बात समझ गई थी, शायद वह आज खामोश न रहना चाहती थी।

"क्या तुम यह नहीं जानते कि जोजफ की बीवी अभी तक जिन्दा है।"

"जोजफ की बीवी?" मैंने प्रश्न करते हुये कहा।

"हाँ हाँ जोजफ की बीवी ज़िन्दा है। उसकी तीन लड़कियाँ हैं, दो लड़के हैं। हर महीने वह अपनी बीवी को खर्च भेजता है। यद्यपि वह दो साल से अपने घर नहीं गया, लेकिन जब कभी उसे तन्खवाह मिलती है, तो

सब से पहिले वह अपनी बीवी को तन्ख्वाह भेजता हैं। पाँच छ: महीने से वह बेकार था, लेकिन इस अर्से में उसकी बीवी को पच्चीस तीस रुपये भेज दिया करती थी"।

"और तुम क्या हो"? मैंनें जल कर कहा।

"मैं..... मैं..... मेरा ख़ाविन्द ज़िन्दा हैं। वह बम्बई में रहता हैं।"

"क्या तुम अपने ख़ाविन्द से मिलती नहीं?"

"नहीं"

"वह क्यों?"

"यह सुन कर क्या करोगे।" वह अपनी जगह सरक कर फिर आराम से सोफा पर बैंठ गई। जेंब से चार मीनार का सिगरेट निकाला, और उसको सुलगा कर कहने लगी——

"मैं अक्सर यह बातें लोगों को सुनाती नहीं, और लोगों को कहने से क्या फायदा। मुझे मालूम है कि लोग मुझे जोज़फ की बींवी समझते हैं, कुछ लोग मुझे उसकी माशूक़ा समझते हैं। वह लोग ही नहीं बल्कि मेरे रिश्तेदार, मेरी बहनें, मेरे दोस्त, लेकिन मैं किसी से कुछ नहीं कहती कि मैं जोज़फ की बीवी हूँ या नहीं। अगर लोग इस क़िस्म की बातें करते हैं तो करें, मुझे क्या, मैं क्यों इन बातों की परवाह करूँ। जो हो, चूँकि तुमने यह सवाल किया है, तो इस का जवाब यह है कि जोज़फ मेरा ख़ाविन्द नहीं है, मेरा ख़ाविन्द अल्फ्रेड

है, और वह अभी तक ज़िन्दा है। मेरे दो बच्चे हैं, वह भी ज़िन्दा हैं। अब वह दोनों फ़र्मों में काम करते हैं, अपना कमाते, और अपना खाते हैं। मैं उन से मिलती हूँ, लेकिन उन से कभी रुपये नहीं माँगती और न ही कभी मैंने अपनी ग़रीबी का वर्णन किया। मैं सोलह साल की थी जब मेरी शादी अल्फ़्रेड से हुई थी। मेरा बाप मजिस्ट्रेट था, मेरा भाई फ़ौज में कैप्टन है, मेरी माँ भी अच्छे घराने की थी। शादी हुई, और शान्दार शादी हुई, मैंने और अल्फ़्रेड ने तीन साल बड़े अच्छी तरह गुज़ारे। यह तीन साल मैं सारी उम्र नहीं भूल सकती। उन दिनों अल्फ़्रेड बहुत ही अच्छा था। वह मुझे सिनेमा ले जाता, नाच घर में ले जाता, हम सैर करने इकट्ठे जाते, होटल में इकट्ठे जाते, और अक्सर शराब इकट्ठे पीते। पहिले साल ही एक बच्चा पैदा हुआ। दूसरे साल कुछ न हुआ। तीसरे साल फिर र्भवती हो गई और अल्फ़्रेड ने मुझे हस्पताल में दाख़िल करा दिया। मैं हस्पताल में दो महीनें रही। अबकी फिर लड़का पैदा हुआ। अब मैं काफ़ी कमज़ोर हो गई थी। रहा सहा सौंदर्य जाता रहा। सूरत पहिले ही कुरूप थी, अब ज़्यादा ख़राब होगई, इस लिये जब मैं वापस घर आई तो काफ़ी दुबली पतली हो चुकी थी। डाक्टर ने मुझे पूरे आराम के लियें कहा था, घर आते ही मैंनें सबसे पहिले एक लड़की को देखा, यह एंग्लो इन्डयन लड़की थी, होगी सोलह सालकी। काफ़ी जवान और ख़ूबसूरत। अगर मैं बदसूरत थी तो वीटा

सचमुच ख़ूबसूरत थी। उसका सुफ़ेद रंग, उसकी नीली आँखें वाक़ई मनोहर थीं। उसने स्कर्ट पहिनी हुई थी, उसकी पिंडलियाँ सुडौल और सुफेद थीं। उसकी कमर पतली और कूल्हे भारी। यह लड़की मेरे पड़ोस में रहती थी। अल्फ़ेड ने मुझे बताया कि उसकी माँ मर गई है। अब बेचारी यतीम रह गई है। इस लिये इस को घर के काम काज के लिये रख लिया गया है। मैंने यह जवाब सुना, और चुप होगई। यह हस्पताल से वापसी की पहिली रात थी।

हम सब एक कमरे में सोते, हमारे पास सिर्फ एक कमरा था, कमरे में दो चारपाइयाँ थीं, एक पर मैं सोई और दूसरी पर अल्फ़ेड और वीटा चटाई पर सोगई। दोनों बच्चे मेरे साथ सो रहे थे, रात काफी गुज़र चुकी थी, लेकिन आँखों में नींद न थी। कमजोरी और बीमारी की निर्बलता की वजह से आँखों में नींद ग़ायब थी, वीटा की मौजूदगी नें मुझे ख़तरे से आगाह कर दिया था, इस लिये आँखों में नींद न आती। मैंने सोने की कोशिश की. लेकिन सो न सकी, शायद एक दो बार नींद का झोंका आया होगा। और अब जब मैंने आँख खोली तो वीटा को अल्फ़ेड के साथ सोते हुये पाया। यह देख कर मेरे बदन में आग सी लग गई, आँखों में ख़ून उतर आया, जी में आया कि इसी वक़्त दोनों का गला घोंट दूँ, लेकिन दिमाग़ ने कहा ऐसा मत करो। मेरा बच्चा मेरे

सीने के साथ चिमटा हुआ था और दूध पी रहा था, अगर मैंने उस वक़्त कुछ कहा तो शायद अल्फ़ेड मुझे इसी वक्त घर से निकाल दे। मैंने सोचा जरा और तन्दुरुस्त हो जाऊँ, उठने बैठने लगूँ तो फिर इस नौकरानी को बाहर निकाल दूँगी, और अल्फ़्रेड को ख़ूब खरी खरी सुनाऊँगी। और यही बातें सोचते सोचते सुबह हो गई।

सुबह हुई और फिर शाम आई, और इसी तरह कितने दिन बीत गये। अब मैं चलने फिरने के क़ाबिल होगई थी। दोनों का इश्क़ अब नाक़ाबिले बरदाश्त हो चुका था, और एक दिन मैंनें अल्फ़्रेड से इस बात की शिकायत की।

अल्फ़्रेड ने मेरी तरफ़ घूर कर देखा, गो यह आँखें जानी पहिचानी थीं, लेकिन आज बिल्कुल अजनबी दिखाई देती थीं। ऐसा मालूम होता था, जैसे अल्फ़्रेड मुझे पहिली बार देख रहा हो और कह रहा हो, तुम कितनी बदसूरत हो, तुम्हारा रंग काला है, तुम्हारा माथा छोटा है, तुम्हारे बाल सख़्त और खरदरे हैं। तुम्हारे जिस्म में सुन्दरता नहीं, तुम्हारे चेहरे पर रंग नहीं, रूप नही, गो तुम्हारी उम्र १९ वर्ष की है, लेकिन तीस वर्ष की बुढ़िया दिखाई देती हो, और मुझे वीटा पसन्द है। यह मेरी डार्लिङ्ग है, इस का रंग सुफ़ेद है, इसकी चमड़ी गोरी है, इसकी आंखें नीली हैं, इसकी बातों में रस है, इस की आंखों में चालाकी है, यह बहुत अच्छा डान्स करती है, मटक मटक

क़र चलती है, और जब शराब पी कर मुझ से बातें करती है, तो ज़िन्दगी का लुत्फ़ आजाता है।

अल्फ़्रेड नें मेरी तरफ घूर कर देखा और कहा अगर इस घर में रहना है तो इसी तरह रहना पड़ेगा। चीटा यहां ही रहेगी, और इस घर में रहेगी, और अगर तुम यहां से जाना चाहती हो तो बड़ीं खुशी से जा सकती हो।

मैं यह जवाब सुन कर खामोश होगई। यहां बहस फ़िज़ूल थी, अब मुआमिला, साफ और खुला हुआ था। मैं इन दो बच्चों को लेकर कहाँ जाती, उनकी परवरिश कहाँ करती, उनकी देख भाल कैसे करती, अपना पेट कैसे भरती। मैं ग्यारह साल उस घर में रही, वह ग्यारह साल मैंने कैसे गुज़ारे, मैंने कैसी कैसी खुशामद की। मैंने कैदे कैसे ग़म सहे। मैंने कितनी बार अल्फ़्रेड के जूते खाये, उसने मुझे मारा, पीटा, मुझे गन्दा खाना खिलाया। कभी नमक ज्यादा होता, और कभी कम, मुझे बर्तन साफ करनें पड़ते, झाड़ू देना पड़ती, कमरा साफ करना पड़ता। और वीटा व अलफ्रेड की घुड़कियों को सुनना पड़ता। अल्फ्रेड हमेशा बच्चों सें घृणा करता, न उनसे प्यार करता, और नहीं उनसे प्यार का इज़हार करता। दोनों अक्सर सिनेमा जाते, होटलों में जाते। डान्स करने जाते, और शराब पीकर आते। और मैं घर में सड़ती रहती, कुढ़ती रहती। दोनों की गालियाँ सहती

रहती। लोगों ने अल्फ्रेड को समझाया लेकिन वह न माना। मेरे वाल्दैन ने समझाया लेकिन वह न माना। उसने वीटा की खातिर एक बार नौकरी भी छोड़ दी। लेकिन उसकें चाल चलन में कोई तब्दीली न आई, एक दिन उसने तो ग़ज़ब ही कर दिया।

मेरे पास आकर कहने लगा– तुम निरी कुतिया हो

क्या हुआ, मैंने धीमे लहजे में कहा।

तुम---तुम, You bloody bitch, तुमने मुझे आतशक दिया, इधर देखो, आज ही मैं बीमारी का टीका लगवा कर आया हूँ, मालूम नहीं तुम किन लोगों के साथ सोती हो; कुतिया कहीं की निकल जा मेरे घर से, फ़ौरन् निकल जा।

यह सुन कर मेरी आँखों में आँसू आगये, मैं अपनी माँ के पास गई, डाक्टर से मुआइना कराया, डाक्टर ने साफ़ कह दिया कि तुम्हें कोई बीमारी नहीं है।

यह सुन कर मुझे गुस्सा आया, तब मैंनें सोचा कि उस घर में रहना ठीक नहीं है। अगर इस शख़्स ने यह बीमारी मुझे दे दी, तो मैं क्या करूँगी। और अब लज्जा और ख़ुशामद से कोई फ़ायदा भी नहीं। इस जहन्नुम से निकलना ही बेहतर है। मैं उसी दिन भाग कर चचा के घर आगई, यहां आकर पहिली बार मैं जौज़फ से मिली, उसकी माँ से, उसकी बीवी से मिली उन लोगों ने मेरी बहुत ख़ातिर की।

मुझे अच्छी तरह अपने घर में रखा मेरी ख़िदमत की, मुझे अपना जाना, और मुझे उदास न होने दिया। अल्फ़्रेड ने मेरे बच्चों को होस्टल में दाख़िल करा दिया था, और उनकी तालीम व तरबियत का ख़र्चा वह ख़ुद बरदाश्त करता था।

और फिर तीसरी जङ्ग शुरू होगई, अल्फ़्रेड फौज में भर्ती होगया और ईराक़ चला गया। वह दिन मुझे अच्छी तरह याद है, जब वह पूना आया था, और ईराक़ जाने वाला था।

मैं एक बार फिर अल्फ्रेड को देखना चाहती थी। मैं प्लेटफार्म पर चली गई और गाड़ी का इन्तिज़ार करने लगी। नियत समय पर गाड़ी आई, मैंने अल्फ्रेड और वीटा को गाड़ी से उतरते हुये देखा। दोनों ख़ुश थे, दोनों हँसते बाहों में बाहें डाले स्टेशन से बाहर चले गये।

अल्फ्रेड फौज में भर्ती होकर, ईराक चला गया और मैं फौज में भर्ती होकर सार्जेण्ट हो गई। मेरी अच्छी ख़ासी आमदनी थी, कभी कभी मैं बच्चों से मिलने जाती, और उन्हें देख कर दिल को तसल्ली देती। अफ़्रेल्ड ईराक़ से बराबर उन्हें रुपये भेजता था। अल्फ्रेड के चले जाने के बाद मैंने कई बार वीटा को देखा। वह कभी अकेली न होती, अक्सर उसके साथ एक अमरीकन सिपाही होता। मुझे मालूम था कि अल्फ़्रेड वीटा को हर महीने रुपये भेजता है। और मुझे यह देख कर बड़ा

ग़ुस्सा आता कि वह रुपये तो मेरे ख़ाविन्द से मँगवाती है, लेकिन ऐश दूसरों से करतीं है।

एक बार वह ईरोज़ में मिल गई। वह अपने अमरीकन आशिक़ के साथ आइसक्रीम खा रही थी। बेहया लड़की। उसके बदसूरत होठों पर लिपस्टिक थी। और उसके सुनहरी बाल उसके शानों पर लहरा रहे थे, उमकी नीली आखों में शरारत झलकती थी, बेहयाई टपकती थी, मैंने उसकी तरफ देखा और मुँह फेर लिया। वह मुझे देख कर हँसने लगी, और अपने आशिक़ के साथ चिपट गई। और मैं वहाँ से चली आई।

जङ्ग ख़तम होगई, अल्फ्रेड वापस आया।

वह अपने घर गया।

मकान पर ताला लगा हुआ था।

वीटा भाग गई थी।

अल्फ्रेड ने वीटा की बहुत तलाश की, लेकिन वह न मिली। वीटा का एक बच्चा भी था, उसका भी कुछ पता न चला। क्या वीटा ने बच्चे को मार दिया था, या किसी यतीम ख़ानेमें दाखिल करवा दिया था, उसकी बाबत किसी को कुछ मालूम न था। अल्फ्रेड ने बम्बई का कोना कोना छान मारा लेकिन वीटा कहीं न मिली, अल्फ्रेड बहुत परेशान था। वह अक्सर उदास और ग़मज़दह रहता। एक दिन उसे यह ख़त मिला।

न्यूयार्क !

प्यारे अल्फ़्रेड !

तुम मुझे मुआफ़ करोगे। मैं विलियम के साथ न्यूयार्क चली आई। जब तुम ईराक़ चले गये, तो मैंने एक दो महीने तुम्हारा इन्तिज़ार किया लेकिन तुम न आये। रातें हसीन थीं और खूबसूरत, और मैं अकेली थी, और तुम मेरे पास न थे। इस दौरान में मुझे विलियम मिल गया। मैंने उसे बता दिया था कि मेरा ख़ाविन्द ईराक़ गया हुआ है। उसने कहा कोई बात नहीं। और हम दोनों इकट्ठे घूमने लगे, इकट्ठे सिनेमा जाने लगे, इकट्ठे नाच करने लगे। और एक दिन हम दोनों ने इकट्ठे शराब पी ली। और उसके बाद हम दोनों हमेशा के लिये इकट्ठे हो गये। एक बार रोज़ी भी मिली थी, उस की नज़रों में हिक़ारत थी। मैंने बहुत अरसा तुम्हारा इन्तिज़ार किया, लेकिन तुम न आये। हमारी दोस्ती बढ़ती गई। उस पर मुहब्बत का रंग चढ़ता गया, और आखिर में मुझे एहसास हुआ कि मैं विलियम को चाहती हूँ। अल्फ़्रेड बुरा न मानना, विलियम से सचमुच मुझे इश्क़ सा हो गया है। जब तक हम दोनों हिन्दुस्तान में थे, वह मुझसे इश्क़ करता था, और अब जब हम दोनों न्यूयार्क में आये हैं, मैं उससे इश्क़ करती हूँ, पहिले वह मेरे पीछे भागता था, अब मैं उसके पीछे भागती हूँ।

लेकिन अल्फ़्रेड— यह सच बात है कि मैं उसके बग़ैर ज़िन्दा नहीं रह सकती। मैं अब हिन्दुस्तान वापस

नहीं आसकती। मुझे अफ़सोस है कि मैं हिन्दुस्तान से चलते वक़्त तुम्हें इत्तिला न दे सकी। इसलिये यह ख़त लिख रही हूँ कि मेरे लिये तुम ज़्यादा परेशान न हो।

तुम्हारी वीटा

ज्योंही यह ख़त अल्फ़ेड को मिला, उसकी हालत ख़राब हो गई। वह सीधा मेरे पास पहुँचा। उन दिनों मैं जोज़फ के साथ एक होटल में ठहरी हुई थी, जब अल्फ़ेड मेरे कमरे में दाख़िल हुआ, उस वक़्त जोज़फ़ मेरे कमरे में मौजूद न था। अगर वह कमरे में मौजूद होता, तो अल्फ़ेड कभी अन्दर आने की हिम्मत न करता। अल्फेड ने मुझे वापस घर चलने के लिये कहा। जब मैं न मानी तो उसने मुझे डराया, धमकाया। वह उस जुआरी की तरह था जो ज़िन्दगी की रेस में सब कुछ हार चुका हो। गो, अल्फ़ेड अब कैप्टेन बन चुका था, उसकी आमदनी पहिले से तिगुनी हो चुकी थी। लेकिन पिटे हुये मुहरे की तरह उसे अपने आप पर विश्वास न रहा था। वीटा की बेवफाई ने उसे लाचार कर दिया था, वह हारे हुये सिपाही की तरह मेरी तरफ लपका। लेकिन मैं उसके क़रीब रहते हुये बहुत दूर जा चुकी थी। वह मुझे पाने की नाकाम कोशिश कर रहा था। उसने मुझे से ईराक़ के मुताल्लिक़ बातें कीं। अपनी तन्ख़्वाह का ज़िक्र किया, अपनी मुहब्बत का रोना रोया, अपने बुढ़ापे का ज़िक्र किया, कहने लगा कि मैं अब थक हार गया हूँ, मेरे

सरके बाल सुफ़ेद हो गये हैं, ज़िन्दगी में एक साथी की ज़रूरत है, तुम मुझे जानती हो, मुझे अच्छी तरह जानती हो, तुम ही मुझे ज़िन्दा रख सकती हो वापस आजाओ, मेरी अच्छी रोज़ी।

लेकिन अब रोज़ी अच्छी न थी, और मैंनें उससे साफ़ साफ़ कहा—— जानते हो तुमने मुझे उस वक़्त छोड़ा था, जब मेरी उम्र १६ वर्ष की थी, मैं उस वक़्त जवान थी, मुझे उस वक़्त तुम्हारी ज़रूरत थी, लेकिन उस वक़्त तुम वीटा को पाकर मुझे भूल गये, मैं मरती रही, कुढ़ती रही, सड़ती रही और तुम उस एंग्लो इण्डियन लड़की के साथ इश्क़ करते रहे। उसके साथ सोये, उसे अपनी बीवी बनाया, मैंने ग्यारह वर्ष तुम्हारी बातें सुनीं, तुम्हारी गालियों को अपनें सीनें में दबाकर रक्खा। वीटा की बेहूदगियों को बरदाश्त किया। मैं रोई, मैंने मिन्नतें कीं, लेकिन तुम न माने। अब किस मुँह से तुम यहाँ आयें हो। अब इस लिये आये हो कि तुम्हारी वीटा तुम्हें छोड़ कर चली गई है। उसने एक और हसीन मर्द तलाश कर लिया है। उसने एक ऐंसे मर्द को ढूँढा है जो तुम से ज्यादा हसीन हैं। तुम से ज्यादह सेहतमन्द है, तुम से ज्यादा रुपयें कमाता हैं। वह अमरीका का रहने वाला है, उसकी सुफ़ेद चमड़ी है और तुम्हारी काली। उसका शहर न्यूयार्क है। और तुम्हारा बम्बई। तुम काले हो, स्याह हो, हिन्दुस्तान के बाशिन्दे हो, बद दिमाग़

कैप्टेन हो। अय्याश क़िस्म के आदमी हो। अच्छा हुआ कि वह तुम्हें छोड़ कर चली गई। अच्छा हुआ कि उसने तुम्हारे मुँह पर तुम्हारा ही जूता मारा। तुम्हारे मुँह पर थूका। अब तुम रोओ, जी भर कर रोओ, लेकिन मैं तुम्हारे साथ कभी न रहूँगी, मैं तुम्हारे साथ कभी न सोऊँगी,। मैं अब तुम्हारी बीवी कभी न बनूँगी। सुन लिया तुमने, अब चले जाओ यहां से, निकल जाओ यहाँ से, जिन क़दमों से आये थे, उन्हीं क़दमों से वापस चले जाओ।

अल्फ़्रेड यह शब्द सुन कर कुछ चौंक सा गया, वह कुछ कहना ही चाहता था कि इतने मे जोज़फ़ अन्दर दाख़िल हुआ, जोज़फ़ को देखते ही अल्फ़्रेड का रंग फीका पड़ गया, वह चुपके से सीड़ियाँ उतर गया।

क्या कह रहा था, जोज़फ़ न पूछा।

कुछ नहीं, अच्छा हुआ कि वह चला गया, अब कभी न आयेगा, उसकी जवानी वींटा ले गई थी, लेकिन बुढ़ापा मुझे देना चाहता था, कम्बख़्त कहीं का।

और अब मैं जोज़फ़ के साथ रहती हूँ, मेरे बच्चे जवान हो चुके हैं। एक की शादी हो चुकी है, मेरी उम्र ४० वर्ष की है, और जोज़फ की उम्र ४६, हम दोनों इकट्ठे रहते हैं, इकट्ठे खाना खाते हैं, कभी कभी इकट्ठे शराब पीते हैं। मैं जोज़फ का हर तरह ख़्याल रखती हूँ। उसके कपड़े सीती हूँ। उसकी गालियाँ सुनती हूँ, उसके लिये फ़र्म में कभी कभी नौकरी कर लेती हूँ। लेकिन

जोज़फ़ को नाख़ुश नहीं रखती। उसकी वजह यह है कि जब मैं भाग कर पहिली बार उनके घर गई थी, तो जोज़फ़ ते मेरी देख भाल की, उसकी माँने मुझे अपनी लड़की जाना। उसकी बीवी ने मेरी ख़ातिर–मान किया। जोज़फ ने मुझे अल्फ़्रेड से बचाया मेरा दोस्त मेरा सहारा बन कर रहा। लोग कहते हैं, कि जोज़फ मेरा अशिक् है, मेरा ख़ाविन्द है, लेकिन मैं आज तुम्हें सच्चे दिल से बताती हूँ–

"कि मेरा ख़ाविन्द अल्फ़्रेड है, अल्फ़्रेड है। और वही रहेगा" यह कह कर रोज़ी की आँखों में आँसू आगये उसने रुमाल से आँसू पोछे और कमरे से बाहर निकल गई।

गोरी

मैं उस दिन अपने दोस्त की तीमारदारी के सिलसिले में मिलने चला गया। मेरा दोस्त बहुत ही बातूनी है। बातें करने का और सुनने का उसे बेहद शौक है। उसके पास बैठ जाओ तो वह बातें करता जायगा। एक घटना के बाद दूसरी घटना, और फिर तीसरी, द्रौपदी के चीर की तरह एक न ख़तम होने वाला सिलसिला, लेकिन इन बातों में दिलचस्पी होती है। ज़िन्दगी एक खुशबू की तरह होती है, और खुद उसने अपनी ज़िन्दगी को एक मस्ती की ज़िन्दगी में ढाल रखा है। छोटी सी उम्र में घर से भाग निकला, और उसके बाद भूख, बेकारी, इश्क का चक्कर। भूख और बेकारी का तो उसने इलाज कर लिया, लेकिन इश्क की समस्या न सुलझा सका। यह कम्बख़्त औरत हमेशा सिर पर सवार रही। जब मैं उसके घर पर पहुँचा तो शाम हो चुकी थी, दिसम्बर का महीना था और इस बार अच्छी-खासी सर्दी पड़ रही थी। शरीर के छिद्र कुछ सिकुड़ से गये थे, और काश्मीर, लाहौर और रावलपिण्डी की याद आरही थी। जहाँ सर्दी इतनी

कड़ाके की पड़ती है कि दांत से दांत बजने लगते हैं।

मेरा दोस्त बिस्तर पर लेटा हुआ था और किताब पढ़ रहा था। मुझे देखकर उसनें किताब पढ़नी छोड़ दी, और बातों में उलझ गया। कुछ बचपन की बातें और जवानी के किस्से, कहानियाँ, इन सब बातों में एक अजूबापन था। ज़िन्दगी जिस तरह सामने आती गई उसी तरह मेरा दोस्त चलता गया। कभी आगे बढ़ा कभी पीछे, लकिन दिल व दिमाग़ में किसी तरह की झंझट नहीं थी। शरीर पर कम्बल ओढ़ते हुए कहने लगा– "तुम शायद भटनागर से नहीं मिले, अजीबो-ग़रीब व्यक्ति था–" यह कहकर वह रुक गया, और क़िस्से का रुख़ मोड़ते हुए कहने लगा--

"चाय पिओगे?"

मैंने सिर हिला दिया यानी मना कर दिया। फिर सिगरेट पेश करते हुए कहा – "भटनागर हमारी फिल्म इण्डस्ट्री का मशहूर केमरा–मेन था। था, का मतलब यह मत समझना कि वह मरगया। वह अभी तक ज़िन्दा है। मैं आज बीस साल पहिले की बात कह रहा हूँ, जब इस शहर में न कोई स्टूडियो था, और न ये बोलने वाली फिल्में बनती थीं। उन दिनों हमें फिल्में बनाने का बहुत शौक़ था। भटनागर को केमरा चलाना आता था। अच्छे घरानें का लड़का, निहायत ही शरीफ, शरमीला, कम बातें करनें वाला और औरत से दूर भागनें वाला।

कम्बख्त अमरीका गया, लेकिन शराब और गोश्त से परहेज़ करता रहा, और औरत के नज़दीक भी नहीं फटक सका। सदाचार का उसे बहुत ख़्याल था। न औरत से मज़ाक करता, न दोस्तों से झूठ बोलता, एक साधी सीधी ज़िन्दगी बसर करता, और दो समय रोटी खाता। तो यह थी उसकी प्रति दिन की ज़िन्दगी।'

"जब वह हमसे मिला तो उसे फिल्म बनानें का बहुत शौक था और मुझे फिल्म में काम करनें का। अँग्रेजी फिल्मों को देखकर मेरा जी चाहता था कि मैं भी उसी तरह स्क्रीन पर लड़ता मरता, पिटता दिखाई दूँ, लड़कियों से मुहब्बत करूँ, इश्क में पागल हो जाऊँ, और महबूबा के लिये तारे तोड़ लाऊँ, और फिर सारी दुनिया मेरा नाम याद करे, और मुझे स्क्रीन का सबसे बड़ा हीरो समझे। लेकिन स्कीम पूरी होती हुई नज़र नहीं आती थी, लेकिन जबसे भटनागर से मुलाकात हुई तब से कुछ धीरज भी बंधा।

भटनागर नें तो मेरी दुनिया बदल दी कहनें लगा--स्टूडियो की कोई ज़रूरत नहीं है। आउट डोर शूटिंग करेंगे, सारी फिल्म आउटडोर में बनायेंगे।

फिर उसने कैमरे की वह बातें कहीं कि मेरी समझ में कुछ नहीं आया। रुपयों के बारे में कहने लगा कि मैंने इन्तज़ाम कर लिया है, एक सेठ से बात चीत की है, वह बिल्कुल तैयार है, बस हिरोइन की तलाश है। वह

मिल जाये तो पौ-बाराह हैं, और हीरो तो तुम खुद ही हो।

यह सुनकर मैं बहुत खुश हुआ और हीरोइन की तलाश में जुट गया।

मैं आज से बीस साल पहिले की बात कर रहा हूँ जब अच्छे घरानों के लड़के लड़कियाँ फिल्मों में आना पसन्द नहीं करते थे। नाम करना तो अलग उन दिनों फिल्म देखना भी पाप समझा जाता था, भला उस समय कहाँ हीरोइन मिलती? और इधर भटनागर कहता—

"यार, कोई पढ़ी लिखी लड़की मिल जाये तो अच्छी बात है, बाज़ारी औरतों से मुझे नफरत है, उन से निकाह नहीं हो सकेगा।"

और मैं दौड़ धूप करता रहा लेकिन उन दिनों पढ़ी लिखी लड़की कहाँ मिलती थी। मुश्किल से अनपढ़ी लड़कियाँ भी नहीं आती थीं। उन्हीं दिनों मेरी मुलाक़ात फज्जू पहलवान से होगई, उसे विलन बनने का बहुत शौक था, वह अक्सर छाती को फ़ैलाकर, गर्दन को अकड़ाकर और मेरे कमज़ोर हाथों को अपने मजबूत हाथों में लेकर इतनी सख़्ती से दबाता कि मेरी जान निकल जाती, और मैं खुशामद, मिन्नत करके उससे जान छुड़ाता, और फज्जू पहलवान निहायत कोमिक अन्दाज़ में कहता—

"देखा मिस्टर, अगर एक बार फिल्म में विलन रोल करलूँ तो अमरीका वाले दंग होकर रह जाँय। हीरोइन

सूरत देखले तो चीख कर नीचे न गिर पढ़े तो मेरा नाम बदल देना, और अगर हीरो को एक ही घूसे में न पटक दूँ तो मुझे फज्जू पहलवान न कहना, बल्कि फटिचर कहकर बाहर निकाल देना।

मैंने फज्जू से कहा—"भाई पलहवान! तुम विलन ठीक मैं हीरो ठीक, लेकिन हीरोइन कहाँ से आये?"

"क्या बाक़ी सब सामान तैयार है?" फजूने मुस्कराते हुए कहा।

"बिल्कुल तैयार।"

"तो हीरोइन हम लाते हैं। मियाँ उसे देखो तो फड़क उठो, इतनी गोरी चिट्टी कि मक्खन जिसके आगे मंद पड़ जाये। और नाम भी तो कितना प्यारा है...."

"क्या नाम है उसका?"

"गोरी! मेरी गोरी—" और उसने मेरी कमर पकड़ अपने सिर के चोतरफा घुमा दिया, मैं एक क्षण हवा में लटकता रहा, मुझे एसा मालूम हुआ कि आज ज़िन्दगी से हाथ धोकर रहूँगा, लेकिन दूसरे क्षण, उसने मुझे ज़मीन पर लाकर रख दिया, जैसे एक बच्चा एक गुड़िया को ज़मीन पर प्यार से रखता है। और फिर कहने लगा—"तो लाऊँ?"

"तुम्हरी क्या लगती है?"

"मुझ पर मरती है, अरे देखो, फिर बात करना, मैं जाता हूँ, कल ले आऊँगा।"

फड्डुर पहलवान चला गया और निश्चित समय पर दूसरे दिन गोरी को साथ लेकर आया। गोरी एक इक्के वाले की बीवी थी लेकिन फड्डुर पहलवान पर मरती थी। फड्डुर पहलवान को फिल्में देखने का बहुत शौक़ था। गोरी ने फड्डुर पहलवान की ओर देखा, भारी भरकम पहलवान का दिल धड़का और दोनों की मुहब्बत शुरू हो गई। इक्के वाला गोरी को बहुत मारता था पीटता था, लेकिन गोरी पहलवान से मिलने से नहीं चूकती थी, पहलवान ने गोरी को सिनेमा दिखाया, और इसलिये गोरी हमेशा के लिये पहलवान की हो गई। ज्यों ज्यों दिन गुज़रते गये, गोरी को पहलवान के बजाय सिनेमा में काम करने का शौक बढ़ता गया, और एक दिन तो उसने फड्डुर से कह दिया कि अगर उसे किसी फिल्म में नौकर न करा दिया तो वह यह शहर छोड़कर भाग जायगी, और किसी फिल्म कम्पनी में भरती हो जायगी। पहलवान डरता था कि गोरी कहीं भाग न जाय। मौका देखकर पहलवान गोरी को ले आया। गोरी वास्तव में गोरी थी, बिल्कुल उजड्ड गंवार लेकिन थी भी खूबसूरत, रंग गोरा चिट्टा, बात बात पर आँखें मटकाती, कूल्हे हिलाती और सीने पर से दुपट्टा सरकाती, और फिर फ़िल्मों में जितनी ऐक्ट्रेसों को देखा था उनके ऐक्शन (Action) दिखाती। भटनागर ने देखा तो नाक नक्शा देखकर कहने लगा—

"भई, लौंडिया तो खूबसूरत है लेकिन है गंवारा बात करने की तमीज नहीं, तहज़ीब नहीं। आवारा है मुझे

बिल्कुल पसंद नहीं।"

इसके बाद मैंने भटनागर की खुशामद की, और पहलवान ने हाथ पांव जोड़े, तो भटनागर ने अन्तमें हमारी बात मान ली। वास्तवमें इस शहर की लड़कियां फ़िल्म में काम करने के लिये तैयार नहीं थीं, मजबूरन गोरीको लेना पड़ा। थोड़े दिन बाद भटनागर नें रुपयों का बन्दोबस्त कर लिया। फ़िल्म खरीदी, और हमने रावीके किनारे शूटिंग शुरू कर दी। गोरी जब मेकअप करती तो रंग रूपमें और निखार आ जाता, खूबसूरत कपड़े पहनती तो और भी कसाई मालूम होती। कम्पनीमें सभी लोग इससे हँसी मजाक करते थे, चुटकियाँ लेते थे, बकवास बकते थे, लेकिन गोरी सबकी बातें सुन लेती थी। एक भटनागर था जो गोरी से अलग रहता था, दूर रहता था, और उसने आज तक गोरी से कोई मजाक नहीं किया। हमेशा अदब से हाथ मिलाता, उसकी इज़्जत करता, और अक्सर बाकी लोगोंको झिड़कता यह क्या बदतमीज़ी है? क्यों बकवास बकते हो?— लेकिन यार दोस्त कब माननें वाले थे, जब गोरीको कोई एतराज़ न था तो भटनागर की कौन सुनता? और इसी तरह शूटिंग शुरू होती रावी नदी के किनारे। कुछ परदे से लटकाकर एक छोटा सा स्टेज बना लिया जाता था, और सूरजकी रोशनीमें (Reflector) लगाकर शूटिंग कीजाती। भटनागरनें अपने रिश्तेदार को डायरेक्टर बना दिया था, उस कमबख़्तको कुछ नहीं आता था। सारा काम भटनागर

को करना पड़ता था। हमें जिस तरह भटनागर कहता उसी तरह काम करते, लोगोंके दिलोंमें भटनागर की काफ़ी इज़्ज़त थी।

एक दिन क्या हुआ–गोरी सैट पर नहीं आई, वह मेकअप कर रही थी लेकिन बाहर सेटपर नहीं आ रही थी। बारी बारी सब लोग उसे मनाने गये। पहले मैं गया बहुत मिन्नत–ख़ुशामद की, गोरी नहीं मानी। फिर दूसरे मनचले नौजवान गये लेकिन गोरी नहीं आई–फिर पहलवान गया लेकिन वह भी अकेला वापस आया। भटनागर जल्दी शूटिंग करना चाहता था, तंग आकर वह ख़ुद गोरी को लेने गया। भाई अब सुनी सुनाई बात बता रहा हूँ, मैं ख़ुद तो उस समय मौजूद नहीं था। सुना गया है कि जब भटनागर गोरीको लेने गया तो वह कुर्सी पर बैठी हुई थी और कमची लेकर भौहें बना रही थी–करने लगीं भटनागर साहब ये भौहें ठीक नही होतीं आप जरा दुरुस्त कर दीजियेगा?

भटनागरने कमची संभाली और गोरीके चेहरे के करीब हो गया। भटनागर के हाथमें कमची थी, करीब दो आंखें थीं, गोरा चिट्टा चेहरा–गोरी भटनागर की तरफ देख रही थी और मुस्करा रही थी।

"तुम क्यों मुस्करा रही हो?" भटनागरने कमची चलाते हुए पूछा।

"आपके हाथ क्यों काँप रहे हैं?" गोरीने आँखें

मटकाते हुए कहा।

"यूँ ही, कोई बात नहीं–यूँ ही।" भटनागरने घबड़ाकर कहा।

इसके बाद लोग कहते हैं, मैंने तो खुद देखा नहीं। गोरीने भटनागर को सीने से लिपटा लिया, उसका मुँह चूमा, उसकी आंखें चूमीं, उसके होठ चूमे और हँसते हुए कहने लगी–

"तुम तो बड़े काठके उल्लू हो, सिर्फ केमरा चलाना जानते हो और कुछ नहीं।" वह हँसते हँसते लोट पोट गई, और इतने अरसेमें बाक़ी लोग आ गये। भटनागरके चेहरे पर लिपस्टिक के निशान थे, लबों पर बोसों की सुर्खी लगी हुई थी, लोग देखकर हँसनें लगे। भटनागरने जल्दी से रुमाल निकाला मुँह साफ किया और शरमसे पानी पानी हो गया और दौड़ता हुआ बाहर निकल गया।

यह थी गोरी और भटनागर की पहली मुलाकात।

कम्पनी में हर आदमी इस घटनाको भूल गया, लेकिन शायद भटनागर नहीं भूल सका। उसके दिले व दिमाग़ पर वे बोसे छा गये गोरीके शरीर की कोमलता, और सीनेकी

कठोरता, उसकी मुस्कान और हंसी, यह सब कुछ भटनागर की रूहमें समा गई, गोरी धीरे धीरे उसके दिमाग़ पर बैठ गई, वह उसका पीछा करती और भटनागर भागता, लेकिन भटनागर भाग कर कहां जा सकता था? वह गोरी के वर्तमान को भूल गया, उसके गौरवको भूल गया, उसके उजड्ड गंवारपने को भूल गया, अगर कल्पना में कुछ याद था तो उसके गरम बोसे, उसका ज्वालामय शरीर, उसकी अलबेली हँसी, उसके शरीरके आकर्षक गोदने, यह सब कुछ याद रहा और बाकी बातें वह भूलता जा रहा था। और अब न फ़िल्म की शूटिंग होती थी और न सेठ रुपया देता था। बस बेकारी से तंग आकर भटनागर और गोरी इस शहर से भाग निकले और बम्बई पहुँचकर किस्मत आजमाई करने लगे। हमलोग कहां पीछे रहने वाले थे, मैं भी एक्टर बननें की लालसा को मनमें दबाये बम्बई आ निकला। भाई वह दिन बहुत बुरे थे, न काम न दाम।

यहाँ कुछ कम्पनियाँ थीं, लेंकिन नये चेहरों से दूर दूर भागती थीं। काफी जगह चक्कर लगाये, लेंकिन काम नहीं मिला, इस दरम्यानमें भटनागर से मुलाकात हो गई। वह एक कम्पनीमें केमरा मैन की हैसियतसे नौकर हो गया था। वह मुझे अपने घर ले गया और मेरी गोरी से मुलाकात कराई। एक छोटा सा कमरा था जिसमें दोनों रहते थें। भटनागरने बताया कि दोनों की जिन्दगी खुश गवार नहीं थी। भटनागर एक शरीफ और गंभीर किस्म का आदमी

था, जब उसनें पहली बार गोरी से इश्क़ किया तो उसके सुधारने की भी कोशिश की, सभ्य बनाने की तरकीबें कीं लेकिन गोरी का अजीब व्यक्तित्व था। शायद उस पर आवारगीके दौरे पड़ते थें तीन चार महीनों तक वह बिलकुल ठीक रहती थी, लेकिन पांचवे महीने वह ऐसीं बातें करतीं कि सारे किये करायें पर पानीं फिर जाता। एक दो बार वह घर से भाग गई, लेकिन फिर वापस आ गई, भटनागर ने उसे माफ कर दिया। इस दौरानमें भटनागर ने बताया कि वह गोरी की किसो बातको नहीं टाल सकता, वह चाहता है कि वह उससे अलग होकर रहे, लेकिन अब वह इस तरह से जिन्दगी गुज़ार नहीं सकता। जहाँ चैन न हो, शांति न हो।

उसकी बीवी उसका कहा न मान, घरसे भाग जाये, और जब वापिस आये तो उससे लड़े, बर्तन तोड़े, और फिर पाँव पड़ जाये, अपनी तमाम गल्तियों की माफी माँगे। चूँकि भटनागर एक असली खानदान से ताल्लुक रखता था, घरवाले भी उसकी इस हरकत पर नाराज़ थे कि किस चुडैलको घरमें रख लिया था? भटनागरके दिल में एक ख़्याल काम करता था कि अगर वह गोरी को लाहोर से भगा करले आया है तो उसे चाहिये कि कम से कम उसकी जिन्दगी तो बना दे। उसे सुधारे ताकि गोरी यह न कहती फिरे कि भटनागरनें उसे धोखा दिया, फरेब दिया। उसका दिमाग़ यह बात बर्दाश्त नहीं कर सकता था कि गोरी

उसकी नज़ारोंके सामने सड़कों पर आवारा घूमती रहे, और ज़िन्दगीके आखरी दिनोंमें सिर्फ एक आवारा औरत बनकर रह जाये।

उन्हीं दिनों उसने एक स्टूडियोमें फिल्म बनाई जो फिल्मी दुनियामें बहुत प्रसिद्ध हुई, और भटनागर एक मशहूर केमरा मैन बन गया। लेकिन गोरीने उसकी ज़िन्दगीको दूभर कर दिया था, वह मुहब्बत अब भी करती थी, उसके पास रहती थी। लेकिन उसके रहन सहनमें, उसकी बातोंमें, उसके चलने फिरने के अन्दाज़में एक आवारगी की झलक नज़र आतीं थी, और जब कभी उसे गुस्सा आता था तो न जाने वह क्या कुछ बक बैठती थी, ऐंसी बातें–जिसे सुन कर उसका जी मिचला जाता। वह कभी कभी सोचता, क्या धागा हमेशा के लिये टूट गया था। नामालूम आवारगी की बास उसकी हरकतोंमें आती थी। लेकिन इन तमाम बातों के बावजूद भटनागर गोरी को अलग नही कर सका। यह उसके शरीफ़ इन्सान होनेका सबसे बड़ा सबूत था। बीचमें उसे कलकत्ता जाने का संयोग प्राप्त हुआ और वह गोरी को कुछ समयके लिये बम्बई में छोड़ गया, और खुद कलकत्ते की फ़िल्म कम्पनीमें नौकर हो गया। वहाँसे भटनागर गोरीको हर महीनें रुपये भेजता रहा, और इधर गोरी अपने कामों में मस्त रही, और सदा लोगोंके साथ खूब घूमती, रात भर शराब पीती, सिनेमा देखती, एक्टरों के साथ घूमती, उन्हें घर बुलाती खाना खिलाती और वह

इसी तरह एक आवारा की तरह ज़िन्दगी गुज़ारती रही।

"एक साल गुज़र गया, दूसरा साल बीत गया।"

भटनागर गोरी को रुपये भेजता रहा, एकाएक भटनागर ने गोरी को रुपये भेजना बन्द कर दिये! मैं कभी कभी गोरी से मिलने जाता था, लेकिन बहुत कम बार मैंने उसे घर में देखा।

इसी तरह तीन साल गुज़ार गये, न भटनागर मिला और न मैं गोरी के घर जा सका, और एक दिन अचानक भटनागर खुदादाद सर्किल के करीब मिल गया।

हम दोनों गले मिले।

"तुम कहाँ?"

"मैं वापिस वम्बई आ गया हूँ।"

"क्यों?"

"एक फ़िल्म बनाने के लियें।"

"बहुत खूब।"

"गोरी कहाँ हैं?" भटनागर ने पूछा।

"मैंने एक दो साल से उसे नहीं देखा।"

भटनागर ख़ामोश हो गया—

"क्या तुमनें दूसरी शादी करली हैं?"

"नहीं तो—।"

"किसके साथ काम कर रहे हो?"

"भाई बड़ा अच्छा मुआवज़ा मिला है, एक हज़ार रुपया माहवार— वास्तव में मुझे उन्हीं लोगों ने बुलाया

है जिनके स्टूडियो में मैं एकबार काम कर चुका हूँ।"

"फिर तो ईद हो गई तुम्हारी।"

इतना कह सुनकर वह चला गया।

दूसरे दिन मिला तो गोरी उसके साथ थी, लेकिन इस गोरी और उस गोरी मे बहुत फर्क था। वह शबाब ख़तम हो चुका था, बहुत पतीली पड़ चुकी थी, आँखों के नीचे हल्के पड़े हुए थे चेहरे पर सिकुड़नें उभर आई थी, शरीर में वह खिचाव नहीं रहा था, वह शोख़ी और शरारत मद्धम पड़ चुकी थी।

मैंने उन दोनोंको देखा और खामोश रहा।

ज़िन्दगी के पुराने साथी अब फिर मिल गये थे। भटनागर को आये हुए करीबन चार रोज़ गुज़रे होंगे कि एक दिन गोरी मेरे घर पर आई और फूट फूट कर रोने लगी

"क्या हुआ गोरी?"

"भटनागर मुझे छोड़कर चला गया।" और वह फिर रोने लगी, उसने ब्लाउजमे से एक चिट्ठी निकाली और मुझे दी ताकि पढ़कर सुनाऊँ।

"यह तुम्हारे नाम की चिट्ठी तो नहीं है, यह तो मुझे लिखी गई है, मैंने ऊँची आवाज़ में पढ़ना शुरू किया—

मेरे दोस्त!

मैं आज वापिस कलकत्ता जा रहा हूँ, मैं बम्बई मे ठहर नहीं सकता। शायद तुम मुझे पागल समझो कि इतनी बड़ी नौकरी को छोड़कर वापिस जा रहा हूँ। लेकिन मैं

तमाम रात सोचता रहा, और आखिरकार मुझे यही फैसला करना पड़ा कि मैं यहाँ से चला जाऊँ। गोरी मेरी कमजोरी बन चुकी है, जब तक मैं कलकत्ता में था गोरी मेरी आँखोंसे ओझल थी, और शायद दिल से भी दूर हो चुकी थी। गोरी के व्यक्तित्वसे तुम वाकिफ हो चुके हो मैंने हर तरीके से उसे सुधारनें की कोशिश की ताकि वह एक समझदार औरत बन सके, उसके व्यक्तित्व में वह पवित्रता आजाये; जो पवित्रता एक औरत का जेवर हो सकती है। गोरीने संभलने की कोशिश की लेकिन हर बार ठोकर खाई, और हमेशा एक गहरे गढ़े में गिरी। मैं खुद नहीं जानता कि ऐसी औरतों के साथ क्या सलूक करना चाहिए? मैं ऐसी ज़िन्दगी गुज़ारने का कायल नहीं, मैं हूँ हंगामे से दूर रहना चाहता हूँ और वह हँगामा पसंद करती हैं। मुझे बातों से नफरत है और वह गालियाँ बकती है, मुझे भड़कीले लिबासों से नफरत है, उसे काले और सुर्ख रंग ज़्यादा पसंद हैं। मैं एक गंभीर साफ सुथरी ज़िन्दगी बसर करने की कोशिश करता हूँ। लेकिन गोरी हरबार ऐसे हंगामे बरपा करती है, कि मेरी ज़िन्दगीमें एक जलन बरपा हो जाती है, रही सही शांति भी साथ छोड़ जाती है, और ज़िन्दगी की तमाम सच्चाइयां और सदाचारिता धीरे धीरे नंगी हो जाती है। अगर रह जाता तो शायद मैं पागल हो जाता। मैं ज़िन्दगी की तमाम अच्छाइयों को अपने पास सुरक्षित रखना चाहता हूँ, जिसकी वजहसे तुम लोग मुझे याद करते

थ, मेरी इज्जत करते थे। यह सच बात है कि मैं गोरी को नहीं भुला सकूंगा उसकी याद मेरे दिल के एक कोने में जमकर बैठ गई है लेकिन मैं समय से पहले मरना नहीं चाहता मैं एक आवारा ज़िन्दगी बसर करना नहीं चाहता और इसीलिये गोरी को वहीं छोड़ रहा हूँ जहाँ से मैंने उसे उठाया था। वास्तव में यह गोरी की मौत नहीं है मेरी अपनी मौत है, मेरी सहन शक्ति की मौत है। यह मुझे मालूम है कि गोरी जल्दी ही मर जायगी वह ख़तरनाक बिमारी की शिकार हो चुकी है और मैं उसके इलाजके लिये उसे काफी रुपया दिये जा रहा हूँ और कुछ वहाँसे भी भेजता रहूंगा। लेकिन गोरी अपने शबाबके आखिरी क्षणो में है, और जब ऐसी औरतों का शबाब ख़तम हो जाता है तो उनकी जिन्दगी का आख़िरी परिच्छेद शुरू हो जाता है। मैं तुम्हें और क्या लिखूँ? गोरी को समझा देना कि वह कलकत्ते नहीं आवे, अगर वह कलकत्ते आई तो मैं मद्रास चला जाऊँगा, और अगर वह मद्रास आई तो मैं कोलम्बो चला जाऊँगा, मैं उसके साथ अब नहीं रह सकता, कभी नहीं रह सकता। तुम्हारा ही

भटनागर

मैंने वह ख़त पढ़ा और पढ़कर गोरी को सुना दिया। गोरी चीख़कर कहने लगी—"वह क्या समझता है कि मैं पीछे आऊंगी? मैं मर जाऊंगी लेकिन कलकत्ता नही जाऊंगी। उसके रुपये भी नहीं चाहिए मैं उसे रुपये वापिस

भेज दूंगी। मैं उसका मनीआर्डर नहीं लूंगी; कम्बख्त डरपोक, और शरमीला, ज़लील, कमीना–" और यह कहकर वह निकल गई।

यह ठीक है कि गोरी न कलकत्ते गई और न भटनागर बम्बई वापिस आया। कुछ साल गुज़ार गये जब एक ख़त मेरे पास आया, लिखा था—

"पेडर रोड अस्पताल, वार्ड नम्बर १३

सिर्फ एक बार मुझसे मिल जाओ।"

तुम्हारी

गोरी

और मैं गोरी को देखने चला गया। गोरी एक साफ सुथरे बिस्तर पर लेटी हुई थी, और क़रीब ही एक नर्स खड़ी थी। गोरीने मुझे देखा और उसके लबों पर हल्कीसी मुस्कराहट दौड़ गई। नर्स ने मुझे बातें करने से मना कर दिया। उस दिन गोरीं वाक़ई साफ और सुथरी दिखाई देती थी, उसका हुस्न निखर आया था, और आँखों में शरमीला पन आ चुका था। शायद ज़िन्दगी और मौत के दरम्यान कोई रास्ता नहीं होता–या इन्सान बहतर ज़िन्दगी बसर करता है या मौत के नज़दीक गहुँचता है। नर्स ने मुझे समझा दिया कि शायद गोरीका आख़िरी दिन है, वह कल तक ज़िन्दा न रह सकेगी।

मैंने गोरीके हाथों को अपने हाथों मे ले लिया और प्यार से थपकी दी, और वापिस चला आया।

दूसरे दिन मालूम हुआ कि गोरी मर गई, मैंने भटनागर को तार दिया, लेकिन वह नहीं आया। दो दिन के बाद मुझे एक लिफ़ाफ़ा मिला जिसमें भटनागर और उसकी बीवी और उसके बच्चों के फोटो थे, भटनागर अपनी बीवी के साथ खड़ा था और उसके ओठों पर उदास मुस्कराहट थी।

यह कहकर मेरा दोस्त ख़ामोश हो गया।

बाहर हवा ठंडी और सर्द थी, और जब मैं अपने दोस्त के घर से बाहर निकला तो गोरी का व्यक्तित्व अजीबो ग़रीब शकलों में मेरे सामने घूम रहा था।

यहाँ से वहाँ तक

फारूक़ी की उम्र होगी तीस वर्ष के क़रीब। पहिले मैं उसके भूत के सम्बन्ध में बतादूँ फिर वर्तमान का हाल बताऊँगा। यों देखने में आप को शब्द सुन्दरता उस पर चिपकाना पड़ेगा। मध्यम क़द, गेहुंआ रंग शरीर गठा हुआ, चौड़ा माथा और चतुर आंखें। उसने बचपन ऐसे वातावरण में गुज़ारा जहां बाप ही घर का अकेला मालिक होता हैं। उसका बाप महात्मा जैसा मनुष्य, नमाज़ और रोज़े का पाबन्द। कट्टर संयमी और घर में डिक्टेटरों जैसा व्यवहार करने का आदी था। यद्यपि घर में सब कुछ था यानी माँ बहन भाई और दो वक्त का खाना। लेकिन बापकी हुकूमत और उसकी कठोर शासक मनोवृति के कारण हर व्यक्ति कुछ बुझा बुझा सा रहता था। बाप के घर में घुसते ही हर व्यक्ति शान्त हो जाता, बापकी आज्ञा के अनुसार हर व्यक्ति दस बजे से पहिले बिस्तर में दुबक कर लेट जाता और नीन्द न आने पर भी सोने का प्रयत्न करता। रात को घर में ऐसा सन्नाटा छा जाता था जैसे यह घर नहीं कोई क़ब्रस्तान है। जहाँ हर

व्यक्ति जीवित होते हुये भी मुर्दों की ज़िन्दगी व्यतीत कर रहा है। घर में दुर्भाग्य से यदि कोई जवान लड़की आ जाये तो हर लड़के को यह हुक्म था कि वह आंखें नीची करके चले। लड़कियों को यह हुक्म था कि वह ऊँची आवाज में बातचीत न करें और खिलखिला कर न हँसें। कोई क़हक़हा न लगे ऐसा मालूम होता था कि घर का हर व्यक्ति अंहिंसावादी जीवन व्यतीत कर रहा है। सिवाये उसके बाप के।

यह अजीब सी बात थी कि फारूक़ी को न बाप से मोहब्बत थी न माँ से, जबकि उसे दोनों से मोहब्बत होनी चाहिये थी। वह आरम्भ में इस पर विचार न कर सका कि उसे अपने माता पिता से मोहब्बत क्यो नहीं थी। यदि यह अपनी माँ से मोहब्बत नहीं करता था तो कम से कम माँ को अपने बेटे से मोहब्बत होनी चाहिये, लेकिन माँ भी बेटे से कुछ खिंची खिंची सी रहती, और वह मोहब्बत, प्रेम, वात्सल्य जो बच्चे को अपनी माँ से मिलता है, फारूक़ी उनसे वंचित रहा। और बाप से तो उसे धीरे धीरे नफ़रत सी होती गई। नफ़रत का कारण कोई "फ्राइडाना" अमल नहीं था बल्कि बाप के व्यवहार का नतीजा था। फारूक़ी का बाप धार्मिक रीति रिवाज का कठोरता से पालन करता था। वह समझता था कि निर्वाण इसी में है कि हर मुसलमान मज़हब के बताये हुये रास्ते पर इमानदारी से अमल करे और वह चाहता था कि

घर का हर व्यक्ति उसका अनुकरण करे।

इस लिये फारूक़ी के दिल में इस्लाम के लिये एक नामालूम सी मोहब्बत हो गई। बिना सोचे समझे लेकिन मज़ाहब से मोहब्बत करते हुये वह अपने बाप से मोहब्बत न कर सका। और उसका ख़ास कारण यह था कि उसके बाप का व्यवहार उसकी माँ के साथ अच्छा न था। यों वह हर महीने ठीक समय पर उसकी माँ को घर के ख़र्च के लिये रुपये दे देता था। उसे वास्तव में अपनी पत्नी समझता, परदे में रहने का उपदेश देता, किसी अन्य पुरुष से बात करने की आज्ञा न देता, दोनों वक्त का खाना घर खाता, किसी बड़े त्यौहार पर पती को नये कपड़े ला कर देता और उससे पूरा पूरा काम लेता था। शायद मोहब्बत यों नहीं होती। ऊपरी तौर पर शायद उसकी माँ ख़ुश रहती लेकिन भीतरी तौर पर उसने कभी अपनी माँ के चेहरे पर प्रसन्नता और सन्तोष के भाव नहीं देखे थे। शायद यही कारण था कि मा अपने बच्चों से खुलकर प्यार न कर सकी। और वह घर के काम काज में इतनी व्यस्त रहती कि उसे बच्चों का ध्यान ही न रहता।

बचपन की बातें फ़ारुकी के हृदय पर इस तरह अंकित हो गई थीं– जैसे दीवार में मेख़ गाड़दी जाती है। उसे अच्छी तरह याद है कि एक दिन उसकी माँ ने उसके बाप को खाना दिया उस दिन तरकारी में कुछ नमक

ज़्यादा निकला। उसके बाप को इतना गुस्सा आया कि उसने थाली उठा कर उसकी माँ के सिर पर दे मारी। बिचारी के सिर पर थाली इतने ज़ोर से लगी कि माथे से खून बहने लगा। लेकिन बाप यह घाव देखकर मोम न हुआ। वह गुस्से से चिल्लाता हुआ दूसरे कमरे में चला गया और माँ रसोई घर में रोती रही, चिल्लाती रही और सिसकियाँ लेती रही। फ़ारूक़ी माँ की सिसकियाँ सुन रहा था। उसका जी चाहता था कि वह जा कर अपनी माँ की गोद में अपना सिर रख दे। और उससे कहे--"रो मत माँ वास्तव में हमारा बाप पशु है।" लेकिन फ़ारूक़ी न बाप से कुछ कह सका न माँ से, बल्कि उसके हृदय में घृणा का एक लावा एकत्रित होने लगा। और इसी वातावरण में उसने दसवीं पास की। अब उसकी उम्र सत्रह वर्ष की थी। अब वह काम कर सकता था। घर की चारदीवारी में रहने के लिये उसका जी न चाहता था। इस घुटे हुये वातावरण से उसे घृणा हो गई थी। हर कदम पर बन्धन। सोच विचार पर बन्धन, मोहब्बत पर बन्धन, दोस्तों पर बन्धन, हंसी पर बन्धन, यह सिलसिला कब तक रहेगा ..... उसने सोचा।

सौभाग्य से दूसरा विश्व युद्ध छिड़ गया और वह फौज में भर्ती हो गयी। उसे ईरान भेज दिया गया। यह अजीब सी बात है कि उसने फौज में चार साल काम किया। वह फौजी ज़िन्दगी से बिल्कुल नहीं उकताया।

उसे इस ज़िन्दगी से बिल्कुल नफरत न हुई। यह डिसिप्लिन जो उसकी दिन प्रतिदिन की ज़िन्दगी पर लागू किया गया था और जिसका वह बचपन से आदी था, उसे कुछ पसन्द आगया। सुबह उठकर परेड करना, साफ़ कपड़े पहनना, हररोज़ अपने बूट पालिश करना समय पर खाना, समय पर सोना, इन तमाम बातों ने उसके स्वास्थ्य पर अच्छा असर डाला। उसकी ज़िन्दगी पहिले से उत्ताम होगई। उसने कुछ कपड़े बनवचालिये और इन चार वर्षों में मज़े से शराब पी थी। इधर उधर घूम लिया था। ईरान से हो कर फिलिस्तीन् जा पहुँचा था। और इस छोटी सी उम्र में ज़िन्दगी के कुछ अनुभव प्राप्त कर लिये थे।

जब लड़ाई खत्म हुई तो वह जहाज़ से कुशल पूर्वक लौटा। न उसकी टांग टूटी न उसकी आंख में गोली लगी। और नही कोई बाज़ू घायल हुआ। यह वास्तव में आश्चर्य जनक बात थी। उसने उसी दौरान में सोच लिया था कि वह घर वापिस न जायगा। उसे अपने घर का घुटा घुटा सा वातावरण रास न आयेगा। और जब वह बम्बई के किनारे पर उतरा तो उसे यह शहर पसन्द आया। शहर का खुला खुला वातावरण। फैला हुआ समुंद्र और नारियल के लम्बे लम्बे वृक्ष सूर्यास्त के समय यह सुहाना दृष्य, आलीशान इमारतें, चलत फिरत उसे निमंत्रण दे रही थी कि वह इस शहर में ठहरे, उसके मस्तिष्क में विचारों का एक जवारभाटा आगया। बड़े

सुन्दर और मनोहर विचार उसके दिमाग़ में थिरकने लगे। वह एक छोटी सी नौकरी करेगा। और एक छोटी मगर सुन्दर और खूबसूरत लड़की से शादी करेगा। एक छोटा सा घर बनायेगा। एक छोटा सा आंगन, दो छोटे छोटे कमरे, एक रसोई घर, एक स्नान गृह और बाहर एक छोटा सा बग़ीचा जिसमें उसके बच्चे खेला करेंगे। और हाँ, उसके कमरे में एक रेडियो होगा। कुछ तस्वीरें, कुछ किताबें, बस और कुछ नहीं। उसे ज़िन्दगी में और कुछ नहीं चाहिये। बस अपने बच्चों की मनमोहक मुस्कराहट, अपनी बीवी की जानी पहिचानी हंसी। उसकी मोहनी आवाज़ बस और कुछ नहीं। न मिल खरीदने की इच्छा थी न कार लेने की आकांक्षा। न प्रधानमंत्री बनने की लगन न पार्टी लीडर बनने की चाह। उसे सिर्फ एक आम साधारण सी ज़िन्दगी बितानें की इच्छा थी। बस और कुछ नहीं। वह अपनी बीवी को खुश रखेगा। बड़ी मोहब्बत और प्यार से पेश आयेगा। वह अपने बाप की तरह बीवी को कभी न मारेगा। वह अपनी बीवी से कहेगा कि "तुम अपने बच्चों से इतनी मोहब्बत करो कि यह अपने बाप को भूल जांय और बाप के दिमाग़ से यह बात निकल जाय कि माँ कभी ज़ालिम नहीं होती, कभी पत्थर की तरह सख़्त नहीं होती, उसकी निगाहों में नरमी होती है, कोमलता होती है, बच्चों के लिये मर मिटती है।" न जाने उसके दिमाग़ में

कभी कभी यह बिचार आता कि वह एक विधवा स्त्री से शादी करेगा और उसकी गोद में सिर रखकर अपनी माँ की मोहब्बत को याद करेगा। बहर हाल उसे अपना घर बनाने की बड़ी अभिलाषा थी।

फारूक़ी मिलिट्री में काम कर चुका था इस लिये वह प्रतिदिन सबेरे नियमित रूप से ठीक समय पर उठता और नौकरी की तलाश में विभिन्न लोगों से मिलता। उसने अपनी डायरी में लोगों के पते लिख लिये थे— और वह प्रतिदिन कुछ लोगों से मिलता। वह उनसे नौकरी मांगता था। इस दौड़ धूप में वह नौकरी ढूंढने में कामयाब हो गया। वह एक प्रसिद्ध फिल्म स्टार का प्रायवेट सेक्रेट्री बन गया। यह उन्हीं दिनों की बात है जब मेरी मुलाकात फ़ारूकी से हुई। बात करने का ढंग उसे आता था। साफ और सुथरे कपड़े पहिनने का उसे शौक़ था। पहिली ही मुलाक़ात में वह मुझे पसन्द आगया। उसने मुझे घर पर बुलाया, खाना खिलाया मैं उसका घर देख कर बहुत खुश हुआ। हर चीज़ ढंग से रखी हुई थी। एक बड़ा कमरा जिसमें एक पलंग था। दाहिनी तरफ दो छोटी अलमारियाँ थीं जिनमें किताबें रखी हुई थीं। सामने की दीवार पर एक ख़ूबसूरत एकट्रेस की तस्वीर थी। बाई तरफ एक मेज़ थी जिस पर कुछ मासिक पत्र थे जिन्हें ठीक ढंग से रखा हुआ था। बात करने के बाद मैंने अनुभव किया कि फारूक़ी को

साहित्य से काफ़ी दिलचस्पी है। फारूक़ी हर अच्छी कविता की खुल कर दाद देता था और कहानी पढ़ कर वह अक्सर लिखने वाले को नम्बर दिया करता था। उसने एक मासिक पत्र उठाकर दिखाया कि उसे मेरी एक कहानी बेहद पसन्द आई है। और उसने दस में से सात नम्बर दिये हैं। मैं खुद एक कहानी लेखक हूं इस लिये मुझे उसकी साहित्यिक दिलचस्पियाँ बेहद पसन्द आईं। क्यों कि इस गंवार शहर में कभी कभार ही ऐसे आदमी मिलते हैं– जिन्हें किताबें पढ़ने का शौक़ हो। उसी दिन फारूकी ने अपने भूतकाल का जिक्र किया– और वह तमाम बातें मुझे बताई जो मैं ऊपर कह चुका हूँ।

एक दो मुलाक़ातों के बाद वह अजनबीयत जाती रही। वास्तव में मुझे वह व्यक्ति बहुत पसन्द आता है जो किताबें पढ़े, सफाई पसन्द हो, जो बातें ढंग से करता हो, जो एक बेहतर ज़िन्दगी बनाने की इच्छा रखता हो। उस दिन फारूक़ी ने कहा मैंने घर ले लिया हैं, नौकरी करता हूँ। सिर्फ एक खूबसूरत लड़की से शादी करना चाहता हूँ। फिर शायद मेरी ज़िन्दगी का सुन्दर सपना पूरा हो जाय।

और मुझे उसके सुन्दर सपने से एक अनजानी सी हमदर्दी हो गई। कितनी छोटी सी तमन्ना थी। उसकी यह अभिलाषा पूरी होनी ही चाहिये, मैंने सोचा। खाना खाने के बाद मैं वहाँ से चला आया। कुछ और इधर उधर

की बातें हुईं, उसने दोबारह मिलने के लिये कहा। मैंने अपने घर का पता दिया, उसने पता नोटबुक में लिख लिया।

तीन चार महीने गुज़र गये थे और फारूक़ी से मुलाकात न हुई थी। एक दिन अचानक वह मेरे कमरे में आया। साफ सुथरे कपड़े पहिने हुये, कमीस में दाहिनी तरफ गुलाब की कली लगाये हुये, ज़रा मुस्कराता हुआ वह सौफे पर बैठ गया। मैं घर में अकेला था।

"कुछ अर्ज़ करूँ?"

"बड़े शौक़ से"

"मुझे इश्क हो गया है"

"बड़ी अच्छी बात है- किससे इश्क हुआ?"

"साफ ज़ाहिर है, किसी लड़की से हुआ होगा। लेकिन बात यह है कि मुझे दो लड़कियों से दिलचस्पी हो गई है। यह तो आप जानतें हैं कि मैं बदसूरत लड़की से शादी नहीं कर सकता, लेकिन अब समझ में कुछ नहीं आता कि क्या करूँ?"

"पहिले बात तो बताओ।"

"बात बिल्कुल सीधी सादी है। जिस लड़की पर मैं मरता हूँ वह वास्तव में सुन्दर है। लेकिन वह मुझे नहीं चाहती। जोभी वह मेरे साथ घूमती है, चाय पीती है, सीनेमा जाती है, लेकिन उसकी बोल चाल, उसके व्यवहार से यह प्रकट होता है जैसे वह मेरे ऊपर बहुत बड़ा

एहसान कर रही है। इसमें कोई शक नहीं कि वह खूबसूरत है। और बेहद खूबसूरत। कभी कभी तो मेरे लगाव और जोश की यह अवस्था हो जाती है कि मैं विवश हो जाता हूँ। और इतना भावुक हो जाता हूँ कि मेरा जी चाहता है कि मैं उसके चरणों पर सिर रख दूँ और अपने बहुमूल्य आंसुओं से उसके सुन्दर पैरों को तर करदूँ ताकि उसे मेरी मौहब्बत का अन्दाज़ा हो जाय, लेकिन उसमें उच्चता का भाव मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"और दूसरी लड़की?"

"उसकी बात अलग है। वह मुझे चाहती है। वह मेरे साथ सैर करने जाती है। जहाँ कह दूँ वहाँ मेरा इन्तज़ार करती रहेगी। कभी कभार वह मेरे घर आती है। मेरा कमरा साफ करती है। किताबों को ढंग से रख देगी, मेरे बिस्तर को ठीक कर देगी, मेरी तरफ देखती रहेगी। उसमें एक अजीब तरह की नम्रता है। एक छोटेपन की भावना है। जैसे वह मुझे देवता समझ रही है। और स्वयं को एक तुच्छ वस्तु समझती है। और अब जब मैं उसके साथ चलता हूँ तो मुझे अनुभव होता जैसे मैं उस पर एहसान कर रहा हूँ। मैं वास्तव में उससे मोहब्बत नहीं कर सकता। मुझे उस लड़की से केवल हमदर्दी है। लेकिन उस लड़की की मोहब्बत पाक और साफ है। अगर मैं उस लड़की से शादी करलूँ तो वह एक वफादार बीवी ज़रूर साबित होगी। लेकिन जिस स्वप्न को मैं देखना

चाहता हूँ वह नहीं देख सकूँगा। मेरे मास्तिष्क में लड़की की कल्पना अजीब सी है। जैसे लड़की में सब खूबियाँ ही खूबियाँ हों। सुन्दर इतनी हो जैसे अजन्ता की कोई सुन्दर मूर्ति मेरे सामने खड़ी हो जाय। वह कोई ऐसी बात न करे जो मेरे मन को खटके। वह इतनी ऊँची न हँसे कि मेरे सौन्दर्य की कल्पना को ठेस पहुँचे। जब वह बिस्तर से उठे तो मैं उसकी झुकी हुई आंखों की तरफ देखता रहूँ। जब वह नीन्द से चूर हो कर आंखें एक क्षण के लिये बन्द कर ले तो मैं नीन्द से चूर आंखों पर गुलाब की पत्तियाँ रख दूँ और गुलाब की पतियों को सहसा चूम लूँ। जब वह अंगड़ाई ले तो फ़िज़ा में बिजली कौन्द जाय, लेकिन इस बिजली को सिर्फ मैं ही अनुभव कर सकूं। सिर्फ मैं देख सकूँ। जब वह मुझसे निगाह मिलाये तो मैं तड़प कर रह जाऊँ। यह बातें सुनकर आप मुझे ज़रूर बेवक़ूफ़ समझते होंगे लेकिन क्या कहूँ। कुछ इस प्रकार का जाल बुन लिया है मैंने औरत के चारों तरफ।"

"जी नहीं! मैं आपको बिल्कुल बेवक़ूफ़ नहीं समझता बल्कि आपकी रोमानी कल्पना को बेहद पसन्द करता हूँ। और यह रोमानी कल्पना लड़की के आस पास अपना जाल बुने हुये है। अगर उस लड़की को छोड़ कर आप की कल्पना बाकी दुनिया को भी घेरले तो आपकी यह कोशिश सराहनीय होगी।"

"मैं आपका मतलब नहीं समझा!"

"मेरा मतलब यह है कि आप दूसरी लड़की से शादी करलें तो बेहतर होगा। उस लड़की से जो आपसे मोहब्बत करती हैं। और आप उससे सिर्फ हमदर्दी रखते हैं। हमदर्दी मोहब्बत की पहिली सीढ़ी है। यह माना कि दूसरी लड़की बदसूरत है, दुबली है, पतली है, उसमें वह आकर्षण नहीं हैं कि जब वह अंगड़ाई लें तो इन्द्रधनुष खिचजाय। कहीं पती–पत्नि का जीवन गुज़ारने के लिये बिजली, इन्द्रधनुष तड़प और आंखों को चकाधों करने वाले रंगों की ज़रूरत नहीं बल्कि दिल से एक दूसरे को समझने की कोशिश और हमदर्दी और प्रेम की ज़्यादा ज़रूरत होती हैं। सौन्दर्य और यौवन ने किसका साथ दिया है जो आपका साथ देगा?"

"लेकिन मुझे उस लड़की से मोहब्बत नहीं हैं।"

"जिससे तुम मोहब्बत करते हो वह तुमसे मोहब्बत नहीं करती और जिसे तुम कहीं चाहते वह तुमसे मोहब्बत करती है। यानी पहिली लड़की से तुम्हारी शादी हो जाय तो सारी उम्र उसका अहसान तुम्हारे कंधों पर रहेगा।

मैं किसी का अहसान उठाने के लिये तैयार नहीं हूँ। मैंने अपनी ज़िन्दगी खुद बनाई हैं। और मेरा अन्तःकरण इजाज़त नहीं देता कि मैं केवल किसी की हमदर्दी का निशान बनकर उसका पती बन जाऊँ। हाँ अगर वास्तव में उस लड़की को मुझसे मोहब्बत होजाये तो फिर"

"फिर ठीक है"

"मैं सोचूँगा। मैं ज़रूर बताउँगा आपको कि मेरी इस मोहब्बत का कैसे अन्त हुआ।" और यह कह कर वह चला गया।

क़ाफी समय बीत गया। फ़ारूक़ी न आया। मैंने सोचा कि फारूक़ी ने शादी करली होगी। लेकिन किस के साथ, इसका फ़ैसला मैं न कर सका। अगर मैं उसकी जगह होता तो मैं उस बदसूरत लड़की से शादी करता ताकि वह सारी उम्र मेरी अहसानमन्द रहती। और अगर आप होते तो क्या करते? ख़ैर जब आप की जिन्दगी में ऐसा मौक़ा आये तो खुद ही फ़ैसला कर लीजियेगा। अभी नहीं– मैं यह जानने के लिये बेताब था कि उसकी मोहब्बत का क्या अन्त हुआ कि एक दिन जब मूसलाधार बरसात हो रही थी, फारूक़ी मेरे कमरे में दाख़िल हुआ। बरसाती उतार कर वह मेरे सामने बैठ गया। वह आज कुछ दुखी और उदास था लेकिन कपड़े हमेशा की तरह साफ सुथरे थे। कमीज़ में दाहिनी तरफ गुलाब की एक कली उदास निगाहों से उसकी तरफ देख रही थी।

"बहुत बुरा हुआ।" उसने मुंह लटकाये हुये कहा।

"क्या किसी नें आत्महत्या करली? यानी उस दुबली पतली लड़की ने।"

"नहीं तो"

"तो क्या खूबसूरत लड़की ने शादी करने से साफ इंकार कर दिया?"

"उऊंहुं"

"तो फिर क्या हुआ?"

"मुझे नौकरी से जवाब मिल गया।" उसने मेरी तरफ बड़ी करुण दृष्टि से देखा।

"यह कोई नई बात नहीं। इस निज़ाम में तो ऐसा ही होगा। ख़ैर। यह बताओ तुम्हारे इश्क का क्या हुआ?"

"पहिली लड़की ने मुझे छोड़ दिया। अब वह एक दूसरे लड़के से इश्क करने लगी है।"

"और दूसरी लड़की?"

"वह बीमार है। दमा और खांसी है। मैं बहुत दिनों से उसका इलाज करा रहा हूँ। लेकिन वह अभी तक स्वस्थ नहीं होसकी। और अबतो मुझे नौकरी से जवाब मिल गया है। अब मैं कुछ नहीं कह सकता।"

"क्यों?"

"शायद आप नहीं जानते कितनी कठिनाई और मुश्किलों से मैंने यह नौकरी प्राप्त की थी। और मैं कितनी मेहनत और ईमानदारी से काम करता था। मैं चाहता था कि मैं इस फर्म में हमेशा काम करता रहूँ। इसी तरह मेरी तंख्वाह बढ़ जायेगी। और मैंने फैसला कर लिया था कि अब उस दुबली पतली लड़की से शादी कर लूंगा लेकिन इस दौरान में वह बीमार होगई और

साथ ही मुझे नौकरी से अलग कर दिया गया।"

"नौकरी से तुम्हें जवाब क्यों मिला?"

"इसमें शक नहीं कि मेरा मालिक मुझ से बेहद खुश था। जितनी मेहनत से मैं काम करता था शायद ही और कोई उस फर्म में काम करता हो। मैं वक्त पर आता और वक़्त पर जाता था। हर चीज़ को चमका कर मेज़ पर रखता था। खतों का जवाब ठीक समय पर देता था। और मालिक को खुश करने के लिये मैंने कोई कसर उंठा न रखी। फाइलों को साफ सुथरा रखना, मेज़, कलम, दावात अपनी जगह पर होना, कमरा उजला उजला सा दिखाई देते रहना, बाहर से आने वालों के साथ मीठा आवाज़ में बोलना, मालिक के सामने झुकक़र और नम्रता से बात करना, हर तरह से आदाब बजा लाना, मालिक और नौकर के सम्बन्ध को बनायें रखना, ताकि दोनों की दूरी इतनी कम न हो जाय कि नौकर मालिक दिखाई दे, और मालिक केवल नौकर। और यह देखिये फाउंटिनपेन जो मालिक ने मेरे काम से खुश हो कर दिया था। लेकिन इसके बावजूद मुझे निकाल दिया गया।

"उसका कोई कारण?"

"जी हाँ! बताता हूँ। उनका एक रिश्तेदार था जो यह न चाहता था कि मैं इस फर्म में काम करूँ। उन्हों ने मेरे मालिक के कान भरे और मेरे खिलाफ शिकायतें

कीं और साथ ही यह कह दिया कि या मुझे रखो या फारूकी को। उसके बाद मेरे मालिक ने मुझे निकाल दिया। मैंने कारण पूछने की कोशिश की लेकिन कोई जवाब न मिला। इस बात का दुख नहीं कि मैं क्यों निकाला गया। अगर मुझसे कोई भूल हुई होती, काम में नाकारा साबित होता, कोई असभ्यता करता, उनके रुपये खा जाता, हिसाब में कोई बेईमानी करता तो कोई कारण बनता। मैंने कितनी मेहनत से यह नौकरी हासिल की थी और इस हैसियत को बरकरार रखने के लिये अपनी तमाम योग्यता को काम में लाया था। मैंने अपने सम्बन्ध में क्या कुछ सोचा था। वह घर, वह बाग़, मेरी होने वाली बीवी, मेरे बच्चे, मेरी हर चीज़ बरबाद हो गई।"

यह कह कर वह ख़ामोश हो गया। बाहर मूसलाधार बारिश हो रही थी। हवा में नमी थी।

"ईमानदारी से इस दुनिया में काम नहीं चलता, इन्सान को पूरा ४२० होना चाहिये।" मैंने फारूकी की तरफ देखते हुये कहा।

"अगर आन्तःकरण इसकी इजाज़त न दे तो?"

"अगर तुम एक सुन्दर घर और एक बीवी को पाना चाहते हो तो अन्तःकरण को कुचल दो।"

वह मेरी तरफ आश्चर्य भरी निगाहों से देखने लगा।

"मैं ऐसा न कर सकूँगा। मैं सिर्फ अपनी खरी मेहनत से अपना महल बनाना चाहता हूँ।

मैं यह बात सुनकर मुस्करा दिया, लेकिन फारूक़ी से कुछ न कहा। यह कह कर वह उठा। बरसाती पहिनी और मूसलाधार बारिश में लम्बे लम्बे डग भरता हुआ मेरी आंखों से ओझल हो गया।

....

और फिर वक़्त गुज़रता गया। बरसात गई, पतझड़ आया, बसन्त आया और चला भी गया। अकाश इसी तरह नीला और स्वच्छ रहा। नारियल के वृक्ष इसी तरह झूमते रहे और उन खाली सड़कों पर हज़ारों इंसानों का काफ़िला भूख और बेकारी को लिये चलता रहा और सिसकता रहा।

एक दिन मैं देर से बिस्तर से उठा और शेव करने ही वाला था कि फारूक़ी कमरे मे दाख़िल हुआ। बिल्कुल साफ और सुथरे कपड़े पहिने हुये था। आंखों में चमक थी और लबों पर मुस्कराहट। ऐसा मालूम हो रहा था जैसे यह कई दिनों से भरी पूरी जिन्दगी बसर कर रहा हो। उसे खुश देख कर मैं भी खुश हो गया।

"नौकरी मिल गई?" मैंन पूछा।

"सिर्फ नौकरी ही नहीं मिली बल्कि और बहुत कुछ मिल गया है। और अब ऐसा दिखाई देता है जैसे मेरा सपना पूरा हो जायगा। मेरा घर, मेरी बीवी, मेरे बच्चे, मेरा बग़ीचा। सिर्फ एक रुकावट है।"

"रास्ते में अभी तक कुछ कांटे हैं?"

"जी हाँ! इसी सम्बन्ध में आपकी राय चाहता हूँ। भिकारी से अमीर और अमीर से भिकारी होना मामूली सी बात है। लेकिन एक बात ठीक है आपकी कि ईमानदारी से इंसान कुछ नहीं कर सकता। बहरहाल आजकच मेरी मालकिन एक औरत है।"

"खूबसूरत और जवान?"

"हूँ"

"शादीशुदा?"

"जी नहीं"

"विधवा?"

"समझ लीजियेगा, पहिले एक शादी की थी। पति मरा नहीं बल्कि पति ने छोड़ दिया। फ़िर मेरी मालकन बम्बई चली आई। एक आलीशान कोठी और एक बेहतर ज़िन्दगी गुज़ारने के लिये वह एक एक्ट्रेस बन गई। पहिले कुछ नहीं था। अब सब कुछ हैं। वह कहती है मुझे किसी मर्द से मोहब्बत नहीं। मर्दों से मोहब्बत करके देखली। सभी ऐश करना चाहते हैं। पहिले खाविन्द ने इस लिये छोड़ दिया था कि मेरी मालकन फ़िज़ूल ख़र्च थी। वास्तव में वह फ़िज़ूल ख़र्च न थी। बल्कि उसके ख़ाविन्द को एक लड़की से मोहब्बत हो गई थी। क्यों कि दूसरी लड़की मालदार थी और मेरी मालकन एक ग़रीब घराने से आई थी। यह दूसरी लड़की दहेज में बहुत कुछ दे सकती थी। पति-पत्नि की लड़ाई हुई और मरी मालन पति को छोड़ कर इधर

चली आई। मेरी मालकिन ने कहा" तुम मालदार लड़की से इश्क़ करो, मैं मालदार आदमी से इश्क़ करती हूँ।" और फिर इस फ़िल्म इंडस्ट्री में चली आई। "मेरे पास बहुत कुछ था। वह शरीर जो अभी तक जवान था। वह आंखें जिनमें जवानी की गर्मी थी। बाल जिनमें सूरज का सोना था। वह बातें जो एक क्षण में मर्दों को उल्लू बना सकती थीं। मैंने सब कुछ किया। मैं मुस्कराई, मर्द मेरे पीछे भागे। मैंने अंगड़ाई ली, उन्होंने मुस्करा कर रहा-- मैं तुम पर मरता हूँ। मैं अपनी पत्नी को छोड़ देने के लिये तैयार हूँ। मैं उनकी मुस्कराहट का मतलब जानती थी। मैं उनके मरने का मतलब जानती थी। लेकिन सब कुछ जानते हुये भी मैंने सब कुछ उनके हवाले कर दिया। उसके बदले में मुझे एक बंगला मिला, एक कार मिली और बैंक बैलेंस बन गया प्रसिद्धि मिली। मेरी कला के चाहने वाले बन गये, लोग मेरी एक्टिंग की तारीफ करने लगे, और नवयुवक मेरे हस्ताक्षर लेने के लिये मेरे घर के चक्कर काटने लगे। पत्रों का ढेर लग गया लेकिन इन सब के बावजूद मैं किसीसे मोहब्बत न कर सकी क्यों कि कोई मुझसे मोहब्बत न करता था।

"औरत अनुभवी है" मैंने फारूक़ी से कहा।

"यह तो मैं भी जानता हूँ"

"लेकिन तुम्हारी मुलाकात कैसे हुई?"

"यों ही। मेरी आदत तो आप अच्छी तरह जानते हैं। मैं लोगों से अक्सर मिलता रहता हूँ। एक आदमी से दूसरे आदमी तक पहुंचना मेरा कर्तव्य सा हो गया है। इस आवारा--गर्दी में मेरी मुलाकात इस औरत से हो गई। मैंने कहा मैं काम चाहता हूँ। उसने कहा तुम आ सकते हो और फिर मैं उनके यहाँ नौकर होगया।"

"तो अब झगड़ा किस बात पर है!" मैंने चिढ़ कर कहा।

"बताता हूँ। मामला एक ही नाजुक पौइण्ट पर आकर रुक गया है। मेरी ईमानदारी से आप अच्छी तरह परीचित हैं। पहिली मुलाक़ात में वह मुझसे प्रभावित हो गईं। मैंने पहिले उनके घर को सम्भाला। सामान तरतीब से रखा। नौकर मुँहफट था, उसे निकाला और उसकी जगह एक सुघड़ और चतुर नौकरानी रखी। खिड़कियों के पर्दे मैले थे उन्हें बदला। सोफा सेट पुराना था उस पर न्या कपड़ा चढ़ाया। कमरे में कुछ जाले थे, उन्हें साफ करवाया। ड्राईगरौब में कपड़े ठीक ढंग से रखे। जमीन पर कालीन बिछाये। तिपाइयों पर गुलदान रखे और गुलदानों में गुलाब के फूल। दीवारों पर रंग करवाया और इलौरा और अजन्ता के चित्रों से कमरे को सजाया। उन्होंने जितने रुपये दिये थे उनमें से एक पाई भी न खाई यह देख कर वह खुश होगईं।"

"बड़ी अच्छी बात है। उन्होंने आपकी तंख़्वाह बढ़ादी होगी।"

"जी नहीं"

"कुछ अलग जेब ख़र्च देदिया होगा"

"नहीं तो"

"तो फिर क्या किया उन्होंने?"

"वह मेरी तरफ देख कर मुस्कराने लगीं" यह कह कर फारूक़ी कुछ झेंप सा गया।

"यानी क्या मतलब आपका?" मैंने घबरा कर पूछा।

"जब औरत मुस्कराती है तो क्या मतलब होता है? यानी वह मुस्कराई, एक अंगड़ाई ली और फिर पांच हज़ार के नोटों का बण्डल मेरे हाथ में दे दिया।"

"क्या करूँ इन्हें?" मैंने मालकन से पूछा।

"ख़र्च करो"

"कहाँ?"

"जहाँ आपका जी चाहे"

"उस एक्ट्रेस का नाम क्या है?" मैंने पूछा।

"नाम नहीं बताऊँगा। उसका नाम एक्ट्रेस "अ" रखली जियेगा।"

जब एक्ट्रेस ने यह शब्द कहे तो मैं उसका सारा मतलब समझ गया। वह कुर्सी से उठी और खिड़की के सामने खड़ी हो गई। और उसने अपने ब्लाउज़ के बटन

खोल दिये और मैं कमरे से बाहर निकल आया। पांच दिन से ये नोट मेरी जेब में हैं। पांच हज़ार के नोट। एक मामूली इंसान के पास पांच हज़ार के नोट। मेरे जी में जो आये कर सकता हूँ। अच्छे अच्छे कपड़े खरीद सकता हूँ। एक नया मकान पहाड़ पर ले सकता हूँ। ग्रामोफोन, रेडियो और दीगर चीजें खरीद सकता हूँ। इन पांच हज़ार रुपयों में हर वह हरकत कर सकता हूँ जिसके लिये मैं इतनी मेहनत करता रहा हूँ। रुपया कितनी मेहनत से मिलता है। और जब कभी मिलने लगता है तो यों ही मिल जाता है। मैं उनका मतलब समझ गया हूँ। वह मुझसे मोहब्बत करती है इसमें शक नहीं। लेकिन उसके घर और लोग आन हैं। यानी उसके चाहने वाले। एक डायरेक्टर आता है जिसने उसे सबसे पहिले फ़िल्म में काम दिया था। और वह आज इसी लिये इस एक्ट्रेस से इश्क़ करता है कि वह उसे पहिली बार स्क्रीन पर लाया था। और मेरी मालकन उसकी शुक्रगुज़ार है। एक और प्रोडयूसर साहब हैं जो काफ़ी बूढ़े हो चुके हैं। बाल बच्चों वाले हैं लेकिन सौन्दर्य और कला के पुजारी हैं। वह मेरी मालकन की मनमोहक अदाओं पर मरते हैं। और अपनी बीबी और बच्चों को छोड़ने के लिये तैयार हैं, अगर मेरी मालकन उनसे शादी करले। लेकिन मेरी मालकन किसी से शादी नहीं करती। सबसे वादे करती है और वादे इसी लिये करती है कि उन सब को उसे अपने

शिकंजे में रखना है। कौन जाने किस वक़्त कौन सा मोहरा काम आजाये। किसी से बिगाड़ने से फायदा क्या ? और मेरी मालकिन मेरी तरफ आकर्षित हुई है। मेरी तरफ आने के सिर्फ़ दो कारण हो सकते हैं। एक तो मेरा काम। जिसे शौक़ और तन्मयता से मैं काम करता हूँ शायद इससे पहिले किसी और ने न किया होगा। और दूसरी बात यह हो सकती है कि शायद मैं उन्हें भा गया हूँ। मैं इतना सुन्दर तो नहीं लेकिन कुरूप भी नहीं। बल्कि पूरे विश्वास से कह सकता हूँ कि जितने पुरुष मेरी मालकिन के घर आते हैं उनसे अधिक सुन्दर हूँ। उनसे अधिक ईमानदार हूँ। उनसे अधिक मालकिन का वफादार हूँ।

"तो तुम शादी क्यों नहीं कर लेते ?"

"शादी तो मैं करलूँ लेकिन मालकिन को मेरी बात मानना होगी।"

"वह मान लेगी अगर तुम उससे शादी करने पर तैयार हो जाओ।"

"मुझे विश्वास नहीं, और विश्वास इस लिये नही कि तुम मेरी मालकिन को नहीं जानते। वह खुद कमाती है। उसे मर्दों से नफरत हैं। वहअ मुझे पने घर रखेगी। मुझे हर चीज़ देगी। शायद मुझे कार ख़रीद कर लेदे। मुझे दस बारह सूट सिलवा दे। मुझे दो नौकर रख दे। मेरे लिये बैंक में रुपये जमा करा दे। मेरे लिये

हर रोज़ अच्छे अच्छे खाने बनवाये, और मुझे सजाकर शहर के किसी मशहूर सीनेमा में ले जाये। ये बातें वह कर सकती है क्यों कि वह अच्छे खासे रुपये कमाती है और मेरे लिये यह भोग विलास कुछ कम नहीं। मेरी निगाहों में शराब की बोतल है, औरत का शरीर है। एक अच्छे मकान, नौकर चाकर, कपड़े, ग्रामोफोन, रेडियो, कार, सब की चाहत है। लेकिन उसकी क़ीमत मुझे देना होगी। जानते हो मैं मालकिन के कमरे की तिपाई बन कर रह जाऊँगा। उसके हार सिंगार के मेज़ की एक तुच्छ वस्तु। आजकल जैसे मर्द अपने आनन्द भवन में औरत को सजाता है और खूबसूरत तितली और परी बनाकर अपनी बग़ल में दबाकर उसे दुनिया की सैर कराता है, उसी तरह शायद मेरी मालकिन मुझे बहलाकर सजाकर, नये कपड़े पहना कर, कार की अगली सीट पर बिठाकर अपने साथ रखना चाहती है। लेकिन मेरा अंत:करण इस बात को नहीं मानता।

"आप बहुत बड़े मूर्ख हैं। आप पिछले दो बरस से फाक़े कर रहे हैं। और जिन्दगी मे पहिला मौक़ा मिला है कि आप ऐश कर सकें, लेकिन आप अबभी भाग रहे हैं। सच बात तो यह है कि आपका दिमाग़ ठीक नहीं। और इस ज़िन्दगी में क्या रखा है। सारी उम्र फ़ाक़े करके मर जाओगे, एक रुपया बैंक बैलेंस न बना सकोगे, नौकरी के लिये एड़ियाँ रगड़ते रहोगे। मालदार दोस्तों के

आगे एक एक रुपये के लिये हाथ फैलाओगे। और फिर भी तुम्हें कोई कुछ न देगा। मकान का किराया न दे सकोगे। और ज़िन्दगी कामयाब न कर सकोगे। और अन्त में एक कुत्ते की मौत मरोगे और कुछ नहीं। आज मौक़ा मिला है उससे लाभ उठाओ। और भूलजाओ इस ईमान और आदर्श को?"

"सोचूँगा। आप की बातों पर ग़ौर करूँगा अच्छा अब इजाज़त दीजियेगा!"

उस दिन के बाद एक लम्ब समय तक वह दिखाई न दिया। और मैं यह सोचता ही रहा कि फारूक़ी की क्या हालत होगी। फिर ख़्याल आता कि वह ज़रूर ऐश कर रहा होगा। शायद उसने कार ख़रीद ली होगी। एक आलीशान कोठी में रहता होगा। अभागा रोज़ाना शराब पीता होगा। और उस एक्ट्रेस के साथ घूमता होगा। मैंने अपने आप को कोसा कि मैंने क्यों उसे शादी करने के लिये कहा। अच्छा ख़ासा फाक़े कर रहा था, मर रहा था, मरने देता। ख़ैर! अब जलन किस बात की।

एकदिन मैं दादर पुल पर से जा रहा था कि अचानक फारूक़ी मिल गया। मुझे देख कर वह खड़ा हो गया

"फारूक़ी!"

वह हंसने लगा।

"शादी हो गई?"

"नहीं तो"

यह उत्तर पा कर मुझे कुछ सन्तोष हुआ।

"तुमने शादी क्यों नहीं की?"

"मैं तैयार था लेकिन वह तैयार न हुई। मैंने मालकिन से कहा मैं शादी के लिये तैयार हूँ अगर आप मेरी चार शर्तें मंजूर करलें। वह चार शर्तें ये थीं:

(१) शादी करने के बाद आप फिल्मों में बिल्कुल काम न कर सकेंगी।

(२) आपका कोई पुराना आशिक इस घर में न आ सकेगा।

(३) इस मकान को छोड़ना पड़ेगा और मेरे कमरे में रहना पड़ेगा।

(४) जो कुछ मैं कमाउँगा उसीमें गुजारा करना पड़ेगा। और एक वफादार पतिवृता हिन्दुस्तानी पत्नी की तरह आपको मेरी सेवा करनी पड़ेगी।

ये चार शर्तें सुनकर वह खिलखिला कर हंस पड़ीं। और हंसते सहते लोटपोट हो गई। जब उनकी हंसी खत्म हुई तो वह उठीं और खिड़की के पास खड़े हो कर क्षण भर कुछ सोचा। इसबार उन्होंने अपने ब्लाउज़ के बटन नहीं खोले। श्रृंगार मेज़ की तरफ गई। दरवाज़ा खोला। एक बटुआ निकाला और सौ सौ के दो नोट मुझे दिये।

"यह आपकी इस महीने की तंख्वाह पेशगी। कलसे आप यहाँ मत आइयेगा।"

मालकिन ने खुद दरवाज़ा खोला। बाहर की तरफ

इशारा किया। मैं दरवाज़े से बाहर निकला और मालकिन ने ज़ोर से दरवाज़ा बन्द किया।"

"और मैं अब आपके सामने हूँ—देखिये यह गुलाब की कली जिसे मैं हर रोज़ अपनी क़मीस में लगाता हूँ। मैं खुश हूँ। मुझे कोई रंज नहीं जोभी नौकरी की तालाश में मारा मारा फिरता हूँ। और मेरे बूट के तले घिस गये हैं। अजकल फाके भी करताहूँ। लेकिन कोई बात नहीं। मेरा अन्तःकरण तो जीवित है। वह तो मरा नहीं मैंनें अपने आप को बेंचा नहीं। बस इसी बात की खुशी है मुझे।"

यह कह कर वह आगे चल दिया और दादर पुल की भीड़ मे ग़ायब हो गया।

मैंनें सोचा—यहाँ से वहाँ तक पहुँचने के लिये फासला तो ज्यादा नहीं लेकिन यह बीच का फासला कैसे और क्यों कर तय किया जाय। शायद इसी पर इंसानी जिन्दगी का उत्थान और उन्नति निर्भर है।